प्रकाशक—
चौधरी एण्ड सन्स,
बनारस सिटी।

मुद्रक—
महादेव प्रसाद,
अर्जुन प्रेस, कबीरचौरा काशी

दो शब्द

जेम्स एलेन महोदय की एक पुस्तक का नाम है 'एट पिलर्स आफ प्रॉसपैरिटी'। उसी पुस्तक के सात लेखो का अनुवाद इस पुस्तक मे किया गया है। उनके लेख बड़े जोशीले और भाव-पूर्ण होते है। नवयुवको मे भी शक्ति संचार करने की क्षमता रखते है। उनसे उत्साहीनो को उत्साह, पतितो को आत्मबल, गिरे हुओ को साहस, निरुद्यमियो को स्फुरणा, चेतनाहीनो को उत्प्रेरणा, पराजितो को शक्ति, असफल होने वालो को आशा तथा अज्ञानियो को ज्ञान की ज्योति मिलती है। ऐसे लेखो के अध्ययन से आजकल का युवक-समाज चरित्र-निर्माण मे अवश्य सफल होगा।

अनुवाद करते समय लेखक के मूल भावो को रखने की चेष्टा की गई है—परन्तु ढांचा इस अभिप्राय से बदल दिया गया है ताकि ये लेख और विचार भारतीय वातावरण के अनुकूल सिद्ध हो। मुझे आशा है कि नवयुवक-समाज को इस पुस्तक से सफलता-प्राप्ति मे अत्यधिक सहायता मिलेगी।

नरसिंह राम शुक्ल।

स्फुरणा-शक्ति

स्फूर्ति ही सफलता-प्राप्ति का साधन है। यही हमारे भीतर के कोयले को जलाकर पानी से भाप बनाने का काम करती है। छोटी-सी-छोटी बौद्धिक-शक्ति को दृढ़ता प्रदान कर उसमें परिचालन-क्रिया की सृष्टि करती है। वे मन्द-बुद्धियाँ जो इसके स्पर्श के अभाव में सुप्त-सी रहती है, इसका संसर्ग पाते ही प्रखर अग्नि का रूप धारण करती है।

स्फुरणा की गणना असाधारण सद्गुणों में है। ठीक इससे मिलते-जुलते दुर्गुण का नाम है आलस्य। यदि किसी में स्फूर्ति का अभाव हो तो, वह नियमपूर्वक अभ्यास एवं कार्य में लगे रहने की प्रवृत्ति—इन दो क्रियाओं द्वारा फिर

से उत्पन्न की जा सकती है। आलसी-से-आलसी व्यक्ति भी उपर्युक्त दो क्रियाओं द्वारा, स्फुरण-शक्ति को प्राप्त कर सकता है।

जो स्फूर्तिहीन है, वे स्फूर्ति-गुण-सम्पन्न के मुकाबिले अर्द्ध-मृतक के समान है। आलसी जब तक काम की कठिनाइयों का हिसाब लगाता रहता है, तब तक स्फुर्तिवान उसे कर डालता है। स्फूर्ति का दूसरा नाम है चैतन्यता। आलसी व्यक्ति जब तक सोता रहता है, तब तक चैतन्य-शक्ति वाला व्यक्ति आधा काम समाप्त कर डालता है।

अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध कवि लॉगफेलो ने लिखा है "कि वे ऊँचे पद, स्थान और रुतबे, जिनपर आज महान पुरुष आसीन है, उन्हें वे अनायास या एकाएक नहीं प्राप्त हुए हैं। वे उनको प्राप्ति के लिए उस सम्पूर्ण रात्रि को आगे बढ़ने के काम में ऐंड़ी का पसीना चोटी कर रहे थे, जब कि, उनके पिछड़े हुए साथी सुख की नींद सो रहे थे।"

आलसी व्यक्ति अवसर की खोज करता है, वह कहता है—

'जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहै देर।'

परन्तु स्मरण रखिये कि "नीके दिन" कभी स्वयम् नहीं आते। कम-से-कम आलसियों के पास तो नहीं ही आते। वे आते हैं उनके पास जिनमें स्फूर्ति होती है, जो चैतन्य रहते हैं जो अवसर सुअवसर नहीं ढूँढ़ते, वरन काम में जुट जाते हैं। जब तक आलसी व्यक्ति आँख मींजता रहता है,

तब तक चैतन्य पुरुष काम आरंभ कर देता है और लगभग दर्जनो अवसरो का उपयोग भी कर डालता है।

स्फुरणा की गणना, प्रमुख शक्तियो मे है। इस गुण के अभाव मे सफल होना कठिन है। प्रत्येक क्रिया का यही आधार है। सारा ब्रह्माण्ड चैतन्य-स्वरूप है। यह चैतन्यता ही इस ब्रह्माण्ड का जीवन है। इसके अभाव मे न ब्रह्माण्ड है और न जीवन।

जब मनुष्य की कार्य-शक्ति क्षीण हो जाती है, जब उसका शरीर निर्जीव होकर गतिहीन बन जाता है, तब लोग उसे मरा हुआ समझने लगते है। परन्तु उसे मरा हुआ समझने का एक और भी कारण है और वह यह कि वह अब नही रहा। इस तरह आलसी व्यक्ति भी समाज की दृष्टि मे एक प्रकार से मरा ही हुआ है।

शरीर और बुद्धि दोनो से, मनुष्य काम करने के लिये ही बनाया गया है न कि आराम करने के लिये। चैतन्य व्यक्ति की प्रत्येक मांस-पेशी, आलसी को धिक्कारती है। क्योकि प्रत्येक रगे और अस्थियाँ लड़ने के लिए बनाई गई है, प्रत्येक गति एवम् विभाग की रचना सदुपयोग के लिए की गई है, प्रत्येक वस्तु का अन्तिम लक्ष्य काम है, प्रत्येक वस्तु प्रयोग के ही लिए रची गई है।

आलसी व्यक्तियो का उत्थान नही होता। उन्हे आनन्द की प्राप्ति नही होती। उन्हे कहीं शरण नहीं मिलती। वे कहीं

आराम नही पाते। वे जिस सुख की खोज मे रहते हैं वह उन्हे नहीं मिलता। आलसी सदा गृह-हीन, दुखी, व्यथित और हताश-सा रहता है। फलतः कठिन से कठिन परिश्रम द्वारा उसे उदर-पूर्ति करनी पड़ती है। क्योकि भोजन के लिए तो उसे कुछ काम करना ही होगा कारण अधिक समय तक वह भूखा रहने की शक्ति नहीं रखता। परन्तु यह कठिन परिश्रम उसे केवल इस विना पर करना पड़ता है कि वह ढंग से कोई काम आरंभ नही करता।

चैतन्य व्यक्ति सफलता की चरम सीमा तक अपने को पहुँचा लेता है। यद्यपि वह चरम सीमा (अन्त) भली भी हो सकती है और बुरी भी तथापि चैतन्यता प्रत्येक दशा मे श्रेयस्कर है, परन्तु यह लाभप्रद तभी सिद्ध होती है जब कि हम इसका प्रयोग किसी अच्छे कार्य पर करते हैं। और जब हम उस कार्य को पूरा कर लेते है तब हमे आनन्द, सफलता तथा उत्थान की प्राप्ति होती है।

चैतन्यता को मार डालना ठीक नही। इससे तो अच्छा यही है कि, यदि सत्कार्यों मे उसके लगाने का अवसर न मिले तो उसे बुरे कार्यों मे ही लगाये रहना चाहिये। इससे 'चैतन्य' के गुण का अभ्यास तो होता रहता है। जो दिन भर पड़े-पड़े चारपाई तोड़ा करते हैं, कुर्सियो पर बैठे बैठे सारा दिन विता देते हैं, इससे उनकी चेतना-शक्ति क्षीण हो जाती है—कार्य करने की शक्ति मन्द पड़ जाती है—उनका जीवन

शून्य हो जाता है, वे जीवन मे निष्फल रहते है । जो लोग अपनी चेतना-शक्ति को न किसी अच्छे काम या बुरे ही काम मे लगाते है, वे कम से कम आलसी तो नही कहे जा सकते। उस बुरे काम का फल ही उनमे नये सिरे से अच्छे काम करने की भावना भरेगा, इसे आप निश्चय समझिये। उस बुरे काम मे प्राप्त किये हुए अनुभव से वे आगे आरम्भ किये जाने वाले भले कार्यों मे अधिक सफल होगे। जिस समय उनकी आँख किसी भले कार्य की ओर घूमेगी. उसी समय से वे पूर्णरूप मे उस ओर झुँक जायँगे, और फिर उनकी शक्ति एक श्रेयस्कर मार्ग द्वारा चलकर उनके सद्ध्येय की प्राप्ति मे सहायक बनेगी। यही नहीं, सब बुरे कार्यों के सम्पादन करने के समय उनमे जितनी शक्ति थी, अच्छे कामो के सम्पादन के समय वह अधिक मात्रा मे हो उठेगी । एक प्राचीन कहावत है कि जो जितना ही बड़ा पापी होगा, वह उतना ही बड़ा महात्मा भी होगा ।

अजामिल और बाल्मीक, इसके उदाहरण है। मनुष्य बुरा करते करते भला काम कर बैठता है। प्रश्न इतना ही है कि उसमे काम करने की स्फूर्ति होनी चाहिये। जिसमे स्फूर्ति न होगी वह न तो कोई भला काम कर सकता है और न बुरा।

चेतना ही बल है, इसके अभाव मे किसी भी प्रकार की प्राप्ति नही हो सकती सद्गुण नही आ सकता। कारण सद्गुणों के माने केवल यही नही है कि आप दुर्गुणी नही है,

आराम नहीं पाते। वे जिस सुख की खोज मे रहते हैं वह उन्हे नहीं मिलता। आलसी सदा गृह-हीन, दुखी, व्यथित और हताश-सा रहता है। फलतः कठिन से कठिन परिश्रम द्वारा उसे उदर-पूर्ति करनी पड़ती है। क्योकि भोजन के लिए तो उसे कुछ काम करना ही होगा कारण अधिक समय तक वह भूखा रहने की शक्ति नही रखता। परन्तु यह कठिन परिश्रम उसे केवल इस बिना पर करना पड़ता है कि वह ढंग से कोई काम आरंभ नहीं करता।

चैतन्य व्यक्ति सफलता की चरम सीमा तक अपने को पहुँचा लेता है। यद्यपि वह चरम सीमा (अन्त) भली भी हो सकती है और बुरी भी तथापि चैतन्यता प्रत्येक दशा मे श्रेयस्कर है, परन्तु यह लाभप्रद तभी सिद्ध होती है जब कि हम इसका प्रयोग किसी अच्छे कार्य पर करते हैं। और जब हम उस कार्य को पूरा कर लेते हैं तब हमे आनन्द, सफलता तथा उत्थान की प्राप्ति होती है।

चैतन्यता को मार डालना ठीक नहीं। इससे तो अच्छा यही है कि, यदि सत्कार्यों मे उसके लगाने का अवसर न मिले तो उसे बुरे कार्यों मे ही लगाये रहना चाहिये। इससे 'चैतन्य' के गुण का अभ्यास तो होता रहता है! जो दिन भर पड़े-पड़े चारपाई तोड़ा करते हैं, कुर्सियो पर बैठे बैठे सारा दिन बिता देते हैं, इससे उनकी चेतना-शक्ति क्षीण हो जाती है—कार्य करने की शक्ति मन्द पड़ जाती है—उनका जीवन

शून्य हो जाता है, वे जीवन मे निष्फल रहते हैं। जो लोग अपनी चेतना-शक्ति को न किसी अच्छे काम या बुरे ही काम मे लगाते है, वे कम से कम आलसी तो नही कहे जा सकते। उस बुरे काम का फल ही उनमे नये सिरे से अच्छे काम करने की भावना भरेगा, इसे आप निश्चय समझिये। उस बुरे काम मे प्राप्त किये हुए अनुभव से वे आगे आरम्भ किये जाने वाले भले कार्यों मे अधिक सफल होगे। जिस समय उनकी आँख किसी भले कार्य की ओर घूमेगी, उसी समय से वे पूर्णरूप मे उस ओर झुक जायँगे, और फिर उनकी शक्ति एक श्रेयस्कर मार्ग द्वारा चलकर उनके सद्ध्येय की प्राप्ति मे सहायक बनेगी। यही नहीं, सब बुरे कार्यों के सम्पादन करने के समय उनमे जितनी शक्ति थी, अच्छे कामो के सम्पादन के समय वह अधिक मात्रा मे हो उठेगी। एक प्राचीन कहावत है कि जो जितना ही बड़ा पापी होगा, वह उतना ही बड़ा महात्मा भी होगा।

अजामिल और वाल्मीक, इसके उदाहरण है। मनुष्य बुरा करते करते भला काम कर बैठता है। प्रश्न इतना ही है कि उसमे काम करने की स्फूर्ति होनी चाहिये। जिसमे स्फूर्ति न होगी वह न तो कोई भला काम कर सकता है और न बुरा।

चेतना ही बल है, इसके अभाव मे किसी भी प्रकार की प्रगति नही हो सकती, सद्गुण नही आ सकता। कारण सद्गुणी के माने केवल यही नही है कि आप दुर्गुणी नहीं है,

वरन, आपमे गुणी होना भी आवश्यक है। अर्थात् आप केवल पाप कर्म से बचे रहने के कारण ही पुण्यात्मा नहीं हो सकते। जहाँ आपने पाप कर्म को छोड़ दिया है, वहीं आपको पुण्य कार्य भी करना होगा, तभी आप पुण्यात्मा हो सकेंगे।

बहुत से ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो प्रयत्न करते हैं, परन्तु अधूरी स्फूर्ति के अभाव मे असफल रह जाते है। उनके प्रयत्न इतने साधारण होते हैं कि, उनसे असाधारण फल निकलना नितान्त कठिन है। फिर भी ऐसे व्यक्ति निन्दा के पात्र नहीं बनते, कारण वे किसी को जानबूझकर हानि नहीं पहुँचाते। लोग उन्हे साधु पुरुष ही कहकर सम्बोधित करते हैं, क्योकि उन्होने, थोड़ी ही मात्रा मे क्यो न हो, आलस्यरूपी दुर्गुण को छोड़ तो दिया है।

वास्तविक साधु पुरुष वही है जो हानि पहुँचाने की शक्ति रखता हुआ भी किसी की हानि न कर उसका भला ही करता है। जिन्हे हानि पहुँचाने की शक्ति ही नहीं है वे भला क्या किसी को हानि पहुँचा सकते हैं ? ऐसे व्यक्ति निर्बल एवम् शक्तिहीन के नाम से पुकारे जाते है। बिना पर्याप्त चेतना-शक्ति तथा स्फुरणा-शक्ति के चरित्र्य-बल की प्राप्ति नही होती। इसके अभाव मे जो भी अच्छापन होगा, वह निर्जीव तथा सुप्तावस्था मे रहेगा। उस अच्छेपन मे चेतना के अभाव मे कोई प्रगति न होगी।

चेतना शक्ति—प्रत्येक प्रकार की क्रिया मे, चाहे वह

अर्थ-दृष्टि वा धर्म दृष्टि का कार्य हो, उत्प्रेरक का कार्य करती है। किसी को कार्य आरम्भ करने की उत्प्रेरणा दिलाना चेतना-शक्ति का ही काम है। चेतना-शक्ति प्रत्येक व्यक्ति को कर्मशील बनने का आदेश करती है और काम मे डॅट जाने का संकेत करती है।

यहाँ तक कि ध्यान-मग्न एवम् एकाग्र-चित्त वृत्तिवाले व्यक्ति भी अपनी तत् अवस्था मे अपने शिष्यो को क्रियाशील बने रहने का सकेत किया करते है। हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे चेतना-शक्ति की आवश्यकता पड़ती है।

एक महान उपदेशक द्वारा अपने शिष्यो को दी गई शिक्षा—'सर्वदा जाग्रत रहो'—विक्रेता तथा महात्मा (साधु) दोनो के लिए लागू है। किसी बात से छुटकारा पाने के लिए उसे सदा देखते रहना आवश्यक होता है। वह छुटकारा ही उस व्यक्ति का अन्तिम ध्येय हो जाता है। उसी महान उपदेशक का यह भी कहना है कि—

"यदि किसी काम को करना है, तो तुरन्त कर डालना चाहिये. यही नही वरन उसका आरम्भ बड़े उत्साह से करना चाहिये।"

महात्मा कबीर ने भी लिखा है—

काल करै सो आज कर आज करै सो अब।

क्रिया-शीलता का रूप रचनात्मक है नकि विनाशात्मक। क्रिया-शीलता का हम जितना ही अधिक सदुपयोग करेंगे,

उतना ही शीघ्र हम आगे बढ़ेगें और विकसित होगे। अधिक चेतनाशक्ति को प्राप्त करने के लिए हमें पहिले से अपने में निहित सारी चेतना-शक्ति का सदुपयोग कर डालना होगा। सम्पूर्ण स्फूर्ति के सद्व्यय कर लेने पर ही हममे नवीन स्फूर्ति उत्पन्न होती है। शक्ति एवम् मोक्ष उसी को मिलता है जो काम मे लग जाता है।

यदि हमे अपनी स्फुरण-शक्ति को लाभ की वस्तु बनाना है तो केवल अच्छे ध्येयो की ओर उसे प्रवाहित कर देने से ही काम न चलेगा, वरन हमे सावधानी से उसके प्रवाह को सीमा के भीतर रखना पड़ेगा, उसकी गतिविधि का निरीक्षण करना होगा; अन्यथा वह इधर उधर जाकर नष्ट हो जायगी। चेतना-शक्ति वा स्फुरण को पानी की नहर समझिये, और ऐसी नहर जिसका जल आप एक बहुत विशाल मरुस्थल मे ले जाना चाहते है, जहाँ जल के अभाव मे त्राहि त्राहि मची हुई है। ऐसी स्थिति मे आपको उस जल को बड़े बड़े कगारो के भीतर रखकर ले जाना होगा, ताकि एक बूँद भी जल नष्ट न हो।

जो आलसी है उसे आश्चर्य होता है, क्योकि उसका सीधा-सादा पड़ोसी उन्नति-शिखर के निकट पहुँचता जा रहा है। उसका पडोसी जो उससे अधिक स्थिर प्रकृति का व्यक्ति है, कभी चिन्तित, उद्विग्न या व्यथित नहीं होता। अधिक से अधिक कार्यों मे अपने हाथ व्यस्त रखता है, उन कार्यों को बड़ी चतुराई के साथ पूरा करता है। कारण उसमें अधिक वीरता

एवम् आत्म-निर्भरता है। येही उसकी सफलता तथा प्रभावोत्पादन के कारण है। पड़ोसी स्फुरण-शक्ति को अपने मे रखता है, सदुपयोग मे लाता है: जब कि दूसरे लोग उसे बेकस कर देते है या उसका दुरपयोग करने लग जाते हैं।

स्फुरण-शक्ति सफलता का पहिला साधन है। यह प्रथम एवम् अत्यावश्यकीय साधन है। इसी से हम अपनी उत्थान-यात्रा आरम्भ कर सकते है। जिसमे स्फूर्ति नहीं होती उसमे क्षमता भी नही होती, और तब उसे काम की भूख नही लगती। फलतः मनुष्य-सुलभ-आत्मसम्मान एवम् स्वतन्त्रता की भावना से वह शून्य रहता है।

बेकारो मे अधिकांश ऐसे लोगो की संख्या है जिनमे स्फुरण शक्ति का अभाव है। वह व्यक्ति जो घंटो गलियो की धूल छानता रहता है, अथवा कम्पनीबाग की बेच पर पड़ा पड़ा अपना अमूल्य समय बिता देता है, वह सोचता है कि कभी न कभी उसे बेकारी से मुक्त करने के लिए कोई न कोई कारण अवश्य टपक पड़ेगा, ऐसा व्यक्ति कभी भी बेकारी के अभिशाप मे मुक्ति नहीं पा सकता। यही नही वरन काम मिलने पर भी वह काम को नहीं सभाल सकता—कारण उसने स्फुरण-शक्ति का ह्रास हो गया है।

शरीर से अपाहिज और मस्तिष्क से सुस्त व्यक्ति के लिये—जो दिन-प्रति-दिन अपने को अयोग्य बनाता जा रहा है—आजीविका का साधन प्राप्त करना कठिन है। जो चेतना-

शक्ति से विभूषित है—वे भी कभी कभी बेकार हो जाते हैं, परन्तु बहुत थोड़े समय के लिए। सर्वदा के लिए बेकार बना रहना उसके लिए असम्भव है। वह या तो काम खोज निकालेगा या काम को स्वयम् पैदा कर लेगा।

"उद्योग करने वाले पुरुषार्थी मनुष्य के पास सर्वदा लक्ष्मी आती है। कायर मनुष्य समझते हैं कि धन भाग्य से मिलता है। यदि उद्योग करने पर भी धन की प्राप्ति न हो तो नये सिरे से उद्योग पर विचार करो और सोचो कि तुम्हारे उद्योग में कहाँ क्या त्रुटि है ? 'हितोपदेश"

उद्योगी व्यक्ति के लिए बेकारी का एक एक क्षण फाँसी के समान बीतता है। वह उस अवस्था को नरक समझता है और उस नरक से छुटकारा पाने के लिए वह अपनी तमाम स्फुरण-शक्ति को एकत्रित कर तपोनिष्ठ बन जाने के प्रयत्न में सन्नद्ध कर देता है। जो काम करने में प्रसन्नता का अनुभव करता है वह कभी भी बेकार नहीं रह सकता।

सच पूछिये तो आलसी व्यक्ति कोई काम करना नहीं चाहता। लेखक के पास प्रायः एक आलसी युवक आया करता है। उसने मैट्रिक तक शिक्षा भी पाई है। आठ वर्ष से वह बेकार घूम रहा है। फिर भी उसे कहीं नौकरी नहीं मिली। कदाचित कभी कहीं काम पर गया हो। उसका काम है, मित्रों और सम्बन्धियों के यहाँ घूम घूमकर पेट पालना। मुझे एक दिन उसकी परिस्थिति पर दया आई। मैंने उससे पूछा क्यों भाई! कुछ काम करोगे ?

उसने मरी हुई आवाज मे कहा—क्या काम है ? मैने उसे बताया कि मै तुमसे प्रति दिन छः घंटा काम लूँगा। काम यह होगा कि मै जो कुछ भाषण दूँगा उसे तुम्हे जल्दी जल्दी लिखना होगा। इस काम को 'बड़ा कठिन' कहकर मुझसे जान छुड़ा वह तुरन्त चला गया। सायङ्काल को जब मै भोजन करने जा रहा था तो वह फिर आ उपस्थित हुआ और केवल एक बार पूछने पर ही पैर धोकर खाने बैठ गया।

कहने का अर्थ यह है कि आलसी व्यक्ति जानबूझकर बेकार रहना चाहता है। काम करने से जी चुराना ही उसका लक्ष रहता है। वह दिन रात ख्याली-पुलाव पकाया करता है।

जो चरम सीमा के सम्यवादी है तथा जो धनी समाज को ही बेकारी का मूल कारण समझे हुए है, वे भी आलसियों को रोटी देने मे हिचकते है। निरुद्यमता समाज की एक भयङ्कर बीमारी है। प्लेग आदि मे हजार दो हजार मरते हैं, परन्तु इस बीमारी से आज हमारे युवक समाज का अधिकांश नवयुवक दल बीमार है।

स्फुरणा एक संयोजित शक्ति है। इसका अकेला अस्तित्व नहीं है। इसके साथ साथ चारित्र्य-बल का बड़ा ही घनिष्ट सम्बन्ध है।

चारित्र्य-बल के अन्तर्गत उत्कण्ठा, उद्योग, दृष्टि तथा लगन—इन चार गुणों का भी सम्मिश्रण होना आवश्यक है।

अतः स्फुरणा के भीतर जो मसाला कूट कूटकर भरा गया है, उनमे उपर्युक्त चार वस्तुयें भी सम्मिलित हैं। जिन्हे अपनी स्फुरणा से कोई फल प्राप्त करना है, उन्हे बड़ी बुद्धिमत्ता से इसी सिद्धान्त पर काम करना होगा। हो-हल्ला और जल्दीबाजी से काम खराब और गति मे धीमापन आ जाता है। अधिक बातचीत करने वाला आदमी कुछ भी काम नहीं कर सकता। चित्त की एकाग्रता-रूपी बारूद से बड़े बड़े लक्ष्य-वेध किये जा सकते हैं। जो जितना ही बात करता है, वह उतना ही अधिक काम भी कर सकता है, ऐसा समझना भूल है।

रावण की मृत्यु निकट थी, राम के बाण उसे क्षण क्षण पर मृत्यु के निकट पहुँचा रहे थे, फिर भी उसे यही आशा बनी रही कि वह राम को पराजित करेगा। उसने इसी भाव को मरते समय प्रकट भी किया था। मरते मरते उसने राम को सुनाकर कहा—ठहरो राम ! मैं तुम्हे अभी समाप्त करता हूँ। राम को उसकी इस अभिमानपूर्ण युक्ति पर हँसी आ गई। उन्होंने कहा—सुन रावण ! संसार मे तीन प्रकार के आदमी होते है। एक गुलाब सरीखे जो केवल फूलते हैं, एक आम सरीखे जो फूलते और फलते दोनो हैं, तीसरे कटहल सरीखे जो केवल फलते है, फूलते नही। एक कहते हैं, एक कहते और करते दोनो है और एक केवल कर दिखाते हैं, कहते नहीं। तूँ केवल कहता है, कर नही दिखाता। कर दिखा तो तेरी प्रशंसा है। एक प्राचीन कहावत है कि जो बादल गरजता है, वह बरसता नही।

काम करने वाला व्यक्ति सायकिल चलाने वाले की भाँति होता है, जो पैरोतले नही वरन् सामने दूर के खतरो को देखता रहता है। उसका ढंग निर्धारित होता है। उसकी योजना सुसंगठित होती है। वह अपनी कठिनाई-रूपी शत्रु को मित्र के रूप मे परिणत कर लेता है। उस नये मित्र का वह सदुपयोग करता है, क्योकि वह उस नये मित्र के स्वभाव से परिचित हो जाता है। उसे यह मालूम हो जाता है कि उसका मित्र कब उसे हतोत्साहित कर सकता है।

वह एक चतुर सेनापति की भाँति आपत्तिकाल मे आने वाली परिस्थितियो को ध्यान मे रखता है। वही वास्तविक 'मनुष्य' है जो पहिले से सावधान रहता है। सोचते समय वह सब कारणो एवम् उपकरणो का समन्वीकरण कर लेता है, उनके झुकाव का अध्ययन कर लेता है। वह कभी भी चकमे से नहीं आता – वह कभी जल्दबाजी नही करता, वह अपनी गतिविधि की चालू शक्ति को पूर्णरूप से सुरक्षित रखता है। उसे आगे की उस जमीन का पता है, जहाँ वह अगला कदम उठाकर रखेगा। वह प्रत्येक मोड़ पर चैतन्य है। वह प्रत्येक मोरचे पर सशस्त्र है। वह अपनी तमाम बाधाओ के लिए उस वानर-राज बालि की भाँति है जो अपने प्रतिपक्षी को देखते ही उसका आधा बल आत्मसात कर लेता था। उसे तुम गाली दो, वह तुम्हे मीठे शब्दो से पुकारेगा। फलतः उसकी वह मीठी पुचकार तुम्हारे हृदय को वेध देगी। तुम्हारी क्रोधाग्नि जलकर स्वयम् राख हो

जायगी। ज्योंही तुम किसी घृणित भावना को लेकर उस स्फुरण-शक्ति-सम्पन्न, चेतना-शक्ति-विभूषित-व्यक्ति के पास जाओगे त्योंही उसकी आँखें तुम्हारी आँखो की सीध मे आजायेंगी—तुम लज्जा से गड़ जाओगे। वह तुममे भी चेतना-शक्ति उत्पन्न कर देगा। वह जिसप्रकार प्रत्येक परिस्थितियो का सामना करने को तैयार रहता है उसी प्रकार प्रत्येक विचार वाले व्यक्तियो का भी सामना करने की वह क्षमता रखता है। उसके सामने तमाम कमजोरियाँ भाग जाती हैं। वह एक प्रकृति-प्रदत्त-प्रतिमा के द्वारा कठिनाइयों पर शासन करता है, उसके इस कार्य मे स्थिरता सहायता पहुँचाती है।

उत्तेजना एवम् आन्दोलन से स्थिरता का विनाश होता है। बड़बड़ाने वाला तथा क्रोधी व्यक्ति का प्रभाव नहीं फैलने पाता। वह पश्चात्ताप के बन्धन मे होता है, वह आकर्षण उत्पन्न नही कर सकता।

"परिश्रम और उद्योग चुम्बक के समान हैं, जो सबसे अच्छे पदार्थों को चुम्बक की भाँति अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं"—[बर्टन]

उद्योग से ही उन्नति होती है आलस्य से नहीं। श्रद्धालु होना, पाप कर्म से बचना, लोकापवाद से डरना, विद्वान होना, सत्कार्य मे उत्साह दिखाना, स्मृति को जाग्रत रखना ये सात साधन हैं जिनसे सफलता मिलती है। "बुद्धदेव"

जो सावधान रहते है—ठीक समय पर तुरन्त काम कर डालते हैं, वह जनता के विश्वासपात्र बन जाते है। कर्तव्य को पूरा कर डालने का उनपर विश्वास किया जा सकता है। वे मालिक जो स्वयम् ठीक समय पर काम करने वाले होते हैं, अपने नौकरो के लिए चाबुक का काम करते हैं। वे अपनी तत्परता से भृत्यो मे अनुशासन उत्पन्न कर देते हैं। जो आलसी कार्यकर्त्ता हैं, वे व्यर्थ समझे जाते है। वे चाहे कितने ही बड़े रुतबेवाले क्यो न हो, बुरा उदाहरण उपस्थित कर एक दूषित वातावरण उत्पन्न करने वाले होते है।

सुदृष्टि (निरीक्षण-क्रिया) तमाम गुणो से श्रेष्ठ है। यही मस्तिष्क का बल हैं। यदि आप मे निरीक्षण क्रिया नही है तो आपका मस्तिष्क ठीक काम नही कर सकता। इसे आप गुम-चर समझिये। इसके रहते हुए आपके मस्तिष्क में कोई चोर नहीं घुस सकता। यह तमाम सफलताओ का निकटतम साथी है। निरक्षिण-क्रिया के अभाव मे मनुष्य मूर्ख समझा जाता है—और मूर्ख को कभी उन्नति की प्राप्ति नहीं होती।

मूर्ख व्यक्ति कभी अपनी रक्षा नहीं कर सकता। उसके मस्तिष्क के द्वार हर प्रकार के लुटेरों के लिए खुले रहते हैं। वह विपत्ति की झोक मे पड़कर भ्रष्ट हो सकता है। वह अधि-कांश के लिए इस बात का उदाहरण है कि किन-किन कार्यों का त्याग कर देना चाहिये ? वह सर्वदा असफल रहता हैं।

मूर्ख होना एक अपराध है, और ऐसे अपराधी का समाज से कभी स्वागत नही होता।

जिस प्रकार बुद्धिमत्ता शक्ति का रचनात्मक तत्व है, ठीक उसी प्रकार मूर्खता कमजोरी की विनाशात्मक शक्ति है। अर्थात बुद्धिमत्ता से शक्ति बढ़ती है और मूर्खता से कमजोरी बढ़ती है। कहा भी है:—

विना विचारे जो करे सो पाछे पछताय।
काम विगारे आपनो जग में होत हँसाय॥

निरीक्षण-शक्ति का अभाव यह सूचित करता है कि आप विचार-शून्य हैं तथा जीवन के व्यापक अङ्गो से आपका कोई सम्वन्ध नहीं। विचार-शून्यता ही, मूर्खता का दूसरा नाम है। असफलता एवम् कष्ट ही इसकी नींव है।

आप ज्योंही अपना जीवन आरम्भ करते हैं, त्योंही आपको जाग्रत होकर व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की ओर चैतन्य हो जाना चाहिये। आपको यह जान लेना चाहिये कि आप क्या है? घर के भीतर, सार्वजनिक जीवन मे, मच पर दूकान मे, विद्यार्थी जीवन मे, कार्यालय मे, एकान्त मे, साथ संगत मे, काम करते समय, बेकार की अवस्था मे, खेलते समय अर्थात जीवन के उस अङ्ग मे जिसमे कि आप हैं; आपका क्या स्वरूप है? आप अपनी उन परिस्थितियों वा उन क्षेत्रो मे जैसा भी भला या बुरा व्यवहार करते होगे, ठीक वैसा ही

प्रतिफल आपकी सफलता पर भी पड़ेगा। यही कारण है कि अच्छी चालचलन का होना समाज मे एक सफल व्यक्ति होने के लिए नितान्त आवश्यक हो गया है। यदि आप व्यग्र एवम् अव्यवहृत मस्तिष्क लेकर समाज के भीतर प्रवेश करेंगे तो आपकी समस्यायें और भी जटिल हो जायँगी। इसका नाशात्मक प्रभाव आपके सम्पूर्ण प्रयत्नो को असफल कर देगा। आप के आनन्द एवम् उन्नति के रूप को विकृत कर देगा।

यदि आप निश्चयात्मक एवम् सुन्दर मस्तिष्क से काम आरम्भ करेंगे तो अवश्य सफल होगे। आपको व्यक्तिगत रूप से जाने बिना लोग आपके नाम पर आकर्षित होगे। फलत· आपको उन्नति की प्राप्ति मे चारो ओर से प्रोत्साहन एवम् ठोस सहायता मिलने लगेगी। इसी से आपको मित्र भी मिलेंगे और सहयोग भी। आप जो भी नया काम आरम्भ करेंगे, उसमे इनसे सहायता मिलेगी। यह आपकी त्रुटियो का संशोधन कर उसे ठीक करेगा, आपके अभावो को दूर करेगा, आपकी योग्यता को बढ़ायेगा, और आपके छोटे मोटे दोषो को समूल नष्ट कर देने मे सहायक होगा।

इसका अर्थ यह समझना चाहिये कि हम दुनिया से उतना ही पाते है जितना कि देते हैं। अच्छे का अच्छा और बुरे का बुरा फल मिलता है। दोषपूर्ण चरित्र से विपरीत प्रभाव और अपूर्ण सफलता तथा उच्च चरित्र से स्थाई शक्ति और ठोस सफलता मिलती है। हम काम करते हैं और संसार उसका उत्तर देता है। जब मूर्ख मनुष्य अनुत्तीर्ण हो जाता है, तो वह दूसरो

पर आरोप लगाता है पर अपनी गलती नहीं देखता। लेकिन जो बुद्धिमान है वे अपनी गलतियों को स्वयम् सुधार लेते है—और यही उनकी सफलता का कारण भी है।

जो व्यक्ति चैतन्य है, जिसमे निरीक्षण-शक्ति का प्रादुर्भाव हो गया है, वह सफलता की प्राप्ति के लिए सब प्रकार से सुसज्जित है। वह प्रत्येक संयोगो को अपना सकता है। वह दोष एवम् अवगुणो के रहते हुए भी उत्थान-मार्ग पर आगे बढ़ सकता है। संसार की कोई भी विरोधी-शक्ति उसका सामना करने का साहस नहीं कर सकती।

उद्योग से प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। जो जितने ही अधिक परिश्रमी होगे उन्हे उतनी ही अधिक प्रसन्नता की प्राप्ति होगी। वे अपने समाज के सबसे सुखी सदस्य होगे।

यद्यपि ऐसे सभी लोग धनी नहीं होते—फिर भी वे बड़े प्रसन्न एवम् आनन्दित होते हैं। उन्हे सन्तोष का पूरा पूरा आनन्द मिलता है और वे ही सब से बड़े धनी है।

जो जाग्रत स्वभाव के है उनके लिए दुःख कोई वस्तु नहीं है। वे कष्ट का नाम तक नही जानते ऐसी बात नहीं है, पर वे कष्ट का अनुभव नही करते है। वे कुसमय को काट डालते है कुसमय उन्हें नही काटता। समय को नष्ट करना वे जानते ही नही। जाग्रतों के लिए जीवन-काल बहुत ही छोटा-सा दीखता है। उनके जीवन मे वर्ष के वर्ष बीत जाते हैं पर उन्हे मालूम नहीं हो पाता।

जिनका मस्तिष्क उर्वर है जिनका हृदय विशाल है, वे अपने प्रत्येक क्षण को उपयोगी बना सकते है। यदि वे कभी समय के कमी की शिकायत करते है तो यह समझ लेना चाहिये कि वे अपने "समय" को काम मे लगा रहे है।

उद्योग से सुस्वस्थ्यथा की प्राप्ति होती है और अपना भला होता है। जाग्रत व्यक्ति प्रत्येक रात्रि को थकावट से चूर हो सोने जाता है। वह सुख की नींद सोता है, उसकी निद्रा मधुर होती है। दूसरे दिन प्रातःकाल जब वह नई स्फूर्ति लेकर जागता है तब फिर अपने कार्य मे नये उत्साह के साथ संलग्न हो जाता है। उसकी भूख एवम् पाचन-क्रिया शुद्ध रहती है। उसे आराम करने मे आनन्द मिलता है। परिश्रम उसके लिए बलवर्द्धक-औषधि का काम करता है। चिन्ता एवम् आलस्य से ऐसे व्यक्ति की क्या मैत्री ? चिन्ता और आलस्य का भूत तो उनपर सवार रहता है जो खाते अधिक, पर काम कम करते है। जो लोग अपने को समाज के लिए उपयोगी सिद्ध करते है वे समाज से अपनी उपयोगिता के बदले, सुस्वास्थ्य, आनन्द तथा समृद्धि पाते हैं। वे अपने दैनिक कार्य को प्रकाशरूप मे रखते है। वे राष्ट्र के 'निर्माता' है और पृथ्वी के आभूषण।

जो लगन वाले व्यक्ति है वे अपूर्ण वस्तु से सन्तोष नही करते। वे पूर्णता प्राप्त करना चाहते है। जिनका जिनसे, या जिस काम से सच्चा लगन है, वे उसे अवश्य पाते हैं। वे उस काम को अवश्य पूरा करते है। जिनमे लगन है,

उन्ही के दिल में औरों के प्रति दर्द भी रहता है। वे कभी आराम से तब तक नहीं बैठ सकते जब तक कि उन्हें उनके ध्येय की प्राप्ति नहीं हो जाती।

आप चाहे दूकानदार हैं या धर्मशिक्षक—आप प्रत्येक अवस्था मे संसार को बहुत कुछ दे सकते हैं। यदि आपकी अपनी उस वस्तु से जिसे आप अपने सच्चे लगन से व्यक्त करते हैं, तो उसका प्रचार एक आश्चर्यजनक रूप मे होगा और बड़ी तेजी से होगा। आपके उस वस्तु की इतनी अधिक माँग होगी कि आप उस माँग को पूरा भी न कर सकेंगे। लगन वाले व्यक्ति बहुत शीघ्र सफलता प्राप्त करते है। इसका कारण यही है कि वे जीते है, मरते नहीं। फरहाद को शीरीं के पाने की लगन थी। उसने अपने जीवनकाल मे ही पहाड़ तोड़ डाला। हनुमान को लक्ष्मण को जीवित देखने की लगन थी, फलतः वे धौलगिरि पर्वत तक को उखाड़कर हाथो हाथ लाने मे सफल हुए।

सफलता के सात साधनो मे से पहला स्तम्भ इस अध्याय में खड़ा कर दिया है। उसको किन-किन उपकरणो को मिलाकर बनाया गया है इसे भी आपने देख लिया। जो व्यक्ति जितनी ही अधिक संलग्नता से इन विभिन्न उपकरणो को मिलायेगा वह उतना ही अधिक उत्थान-मन्दिर का निर्माण करने मे सफलता प्राप्त करेगा।

—००—

मितव्ययता

प्रकृति का भण्डार सदा भरा पूरा रहता है। वह कभी खाली नहीं होता। किसी वृक्ष की एक डाल काट दीजिये। दो तीन वर्ष बाद, फिर उसी स्थान से दो तीन छोटी-छोटी डालियाँ निकल आयेंगी। प्रकृति ने जितने भी पदार्थ बनाये हैं उनमें कोई व्यर्थ नहीं है। सबका सदुपयोग है। यहाँ तक कि मलमूत्र भी खाद इत्यादि के काम में आ जाता है।

प्रकृति प्रत्येक निष्काम वस्तु का नाश करती रहती है, पर उस उपयोगरहित वस्तु को वह अपने ही में मिला लेती है। मनुष्य का शरीर भी मरणोपरान्त उसी प्रकृति में मिल जाता है। प्रकृति इन वस्तुओं के अस्तित्व को मिटाती है, इनका नाश

करने के लिए नहीं वरन् उन्हे पूर्णरूप में लाने के लिए अथवा उनकी सहायता से किसी नई वस्तु का निर्माण करने के लिए। वह अपनी शक्ति को कभी भी नष्ट नहीं करती। वह नष्ट हुई वस्तु का भी संचय कर लेती है।

प्रकृति का यही संचय-सम्बन्धी गुण 'मनुष्य' में चारित्र्य गुण का रूप धारण कर लेता है। फलतः वह अपनी अनेक शक्तियो को प्रकृति की तरह पहिले संचित करता है। फिर अपनी योजना को कार्यान्वित करने मे उनसे सहायता लेकर सफलता प्राप्त करता है।

अर्थ-संचय उपर्युक्त सिद्धान्त का एक भौतिक अथवा मोटे हिसाब से सांसारिक स्वरूप है। संचय करने वाले दो प्रकार की सम्पत्तियो का संचय करते हैं। (१) सांसारिक सम्पत्ति का (२) पारलौकिक सम्पत्ति। ताम्र से चांदी, चांदी से सोना और फिर उसका कोई और ठोस रूप देना सांसारिक सम्पत्ति का संचय कहलाता है । कोई उससे स्थाई सम्पत्ति (जमींदारी) खरीदता है और कोई उसे बैक मे जमा कर देता है। सोना या सोने से ठोस, इन दोनो रूपो मे परिणत कर वह अपनी सम्पत्ति को उत्तरोत्तर बढ़ाता ही रहता है, घटाता नहीं। ठीक इसी प्रकार पारलौकिक सम्पत्ति का संचय होता है। इच्छा से बुद्धि, बुद्धि से सिद्धान्त, सिद्धान्त से शक्ति और शक्ति से फिर कर्म-शीलता के रूप मे पारलौकिक सम्पत्ति का वह रूप धारण करता है। इसप्रकार से सम्पत्ति का

संग्रह करने वाला अपने जीवन मे लाभ उठाता है। ब्याज और चक्रवृद्धि ब्याज के द्वारा उसकी सम्पत्ति बढ़ती ही रहती है, घटती नही।

सच्ची मितव्ययता यदि आप जानना चाहते है तो, न तो इसे आप कंजूसो मे पा सकते है और न शाहखर्चों मे ही। शाह खर्ची एवम् कंजूसी के मध्य की जो परिस्थिति है, वास्तव मे उसी का नाम मितव्ययता है। चाहे धन हो या बुद्धि, यदि आप उसे नष्ट कर रहे है तो आप अपने को शक्तिहीन बना रहे हैं। साथ ही यदि आप स्वार्थवश उसे तिजोरी मे बन्द रखते है तो भी आप अपने को शक्ति-हीन बना रहे है। शक्ति-लाभ करने के लिए चाहे बुद्धि हो या रुपया-पैसा, उसे एकत्रित करने की आवश्यकता है, परन्तु एकत्रित करने के उपरान्त उसका सदुपयोग भी होना चाहिये। धन या बुद्धि को जुटाना लक्ष्य हो, परन्तु सच्चा ध्येय ही व्यवहार मे लाना चाहिये। आप उसे जितना ही अधिक सद्व्यवहार मे लायेंगे, उतनी ही अधिक उसकी वृद्धि होगी।

धन की तीन गति होती है। दान, भोग और नाश। अतएव जो न देता है और न खाता है, उसकी तीसरी गति होती है। अर्थात् वह नाश को प्राप्त हो जाता है। 'हितोपदेश'

मितव्यता के सात मार्ग है। इन सभी मार्गों मे मितव्ययी बनना पड़ेगा। जैसे रुपया-पैसा, भोजन, वस्त्र, मनोरंजन, आराम, समय तथा स्फुरणा।

रुपया-पैसा—सांसारिक शक्ति का एक बहुत बड़ा साधन है। इससे आप बहुत वस्तुओं का परिवर्तन कर सकते है। प्रायः सभी वस्तुयें इससे खरीदी जा सकती हैं। जो धनी बनना चाहते हैं, जो यह नहीं चाहते कि वे ऋणभार से ग्रस्त हो उन्हे आय व्यय का ठीक-ठीक अनुपात रखना होगा। जब तक उनकी आय व्यय से अधिक न होगी अथवा आय से व्यय को कम न करेंगे तब तक उनके पास पूँजी नहीं बन सकती। जो आय से व्यय अधिक करते हैं उन्हे विपत्ति आ पड़ने पर दूसरे का मुँह देखना पड़ता है। जो व्यर्थ उड़ाया जाता है, जो व्यर्थ के शौक में फूँक दिया जाता है, जो हानिकर विलासिता के पीछे नष्ट किया जाता है, वह धन का अप-व्यय और शक्ति के नाश का कारण है। जो व्यक्ति ऐसा करता है, वह कभी भी धनी नहीं हो सकता। उसके पास कितना ही धन क्यो न आता हो, वह गरीब का गरीब ही बना रहेगा।

वह धनी कंजूस जिसने खूब धन गाड़ रखा है, गरीब से बढ़ कर नही हैं। कारण एक तो सदा उसे धन की लिप्सा बनी रहती है और दूसरे वह निर्धन की ही तरह हाय रुपया! हाय रुपया! भी करता रहता है। उसका गड़ा हुआ धन न तो समाज के काम आता है और न उसके।

रुपये से समाज का कई प्रकार का हित होता है। यदि आपने समाज को 'दान' स्वरूप कुछ दे दिया तो आप

यह न समझें कि आपने समाज पर बहुत बड़ा उपकार का बोझ लाद दिया, अथवा समाज को उन्नति-शील बनाने में सहायक हो गए। आज की दान-प्रणाली से समाज में बड़े-बड़े रोग उत्पन्न हो गये हैं। सेंत की रकम खाने की लोगों को एक तरह की आदत पड़ गयी है। लोग परिश्रम से जी चुराने लगे हैं। यदि आपके पास धन है तो उसे सेंत-प्रणाली द्वारा दानकर समाज में निरुद्यमियों को प्रोत्साहन न दें। आप उस रुपये से कोई व्यवसाय खोलें, उससे सहस्रों व्यक्ति आदर्श मार्ग से अपनी आजीविका प्राप्त करेंगे। एक ओर यह होगा और दूसरी ओर आपका धन काम में ही लगा रहेगा। धन का इससे बढ़कर कोई दूसरा सदुपयोग अभी तक नहीं सिद्ध हुआ है।

मितव्ययी का यह लक्षण नहीं है कि रुपये को गाड़-गाड़ कर रखे। सच्चा मितव्ययी वह है जो सब समझ-बूझकर व्यय करे। यदि आप एक रुपया पैदा करते हैं तो उसमें से कुछ न कुछ, अवश्य बचावें कि समय पड़ने पर वह काम दे।

वह दरिद्र जो धन संग्रह करना चाहता है, कौड़ियों से अपना संग्रह आरम्भ करे। यदि वह पहिले रुपयों पर ही लपकेगा तो न पैसा ही पा सकेगा और न रुपया ही। हाँ यदि वह कौड़ियों का संग्रह आरम्भ करेगा तो धीरे-धीरे अवश्य उसके पास पैसे हो जायेंगे और फिर पैसे से रुपया होते क्या देर लगती है? जिसने कौड़ियों का संग्रह आरम्भ

कर दिया है, वह थोड़े ही दिनो मे एक अच्छा संग्रही वन जायगा—यह निश्चय है। बहुत से दुकानदार ऐसे हैं जो अपर्याप्त धन से दुकान खोलकर अधिकांश धन पहिले विज्ञापनबाजी मे ही खरच कर देते हैं। वे समझते हैं कि दुकानदारी मे सफलता पाने की सबसे बड़ी कुञ्जी विज्ञापनबाजी है। परन्तु जब वे इस धोखे मे पड़कर अपनी अधिकांश पूँजी उड़ा चुकते हैं तब कहीं उन्हे होश होता है कि उन्होंने गलत मार्ग अपनाया है, परन्तु उस समय तक वे दिवालिया की सीमा तक आ गये होते है। आरंभ छोटा हो तो उसका मध्य बड़ा और अन्त और भी बड़ा हो सकता है। परन्तु आरंभ ही यदि बहुत बड़ा हुआ तो उसके मध्य और अन्त के 'बहुत बड़ा" होने मे सदा शंका लगी रहती है। आपके पास जितना ही संचित धन हो, उसे उतने ही संकुचित क्षेत्र मे लगाने की बात सोचिये। सौ दो सौ रुपये लेकर कलकत्ते की चौरंगी में मत जाइये। इतने रुपये से आप वहां फुन्नीदाने का खोमचा भी नहीं लगा सकते। हॉ दिहात के किसी कोने मे आप उसी दो सौ रुपये से एक अच्छे जेनरल-मर्चेन्ट बन सकते हैं।

मैं अपने गॉव का दृष्टान्त उपस्थित करता हूॅ। मेरे गॉव मे दो व्यक्तियो ने व्यापार आरंभ किया। एक ने एक सहस्र रुपया लगाकर शहर मे स्टेशनरी की दुकान खोली। वह दुकान फेल हो गई। एक हजार रुपया केवल दो वर्ष मे एक हजार रास्ते गया। दूसरे ने जो बहुत कम पढ़ा लिखा था, तीन रुपये की

पूँजी से गुड़,धनिया, लेहसून, प्याज तथा चबैना आदि की दुकान आरंभ किया और उसी नन्हे से गाँव मे आज उस दूकान को चलते हुए आठ वर्ष हो रहे हैं। मेरा गाँव किसी शहर का रौनकदार मुहल्ला नहीं, एक बीस घर के गरीब किसानो की बस्ती है। आस-पास के गाँव मे भी गरीब किसान ही बसते है। उस व्यक्ति का कहना है कि उसे अब दो सौ रुपये प्रति वर्ष की आय है। आस पास के दिहातो मे वह अब 'महाजन' हो चला है। लगभग दो ढाई सौ रुपया उसका सदा लोगो पर पावना बाकी लगा रहता है। उसने थोड़े में आरंभ किया पर अच्छा लाभ उठा रहा है। इसप्रकार अभी लाखो की संख्या मे ऐसे सुअवसर दिहातो मे खुले पड़े हैं। संतोष के साथ काम करने वालो की सब जगह आवश्यकता है और सब जगह उनकी सफलता भी ध्रुव है।

पूँजी और क्षेत्र दोनो अनुकूल होना चाहिये। एक उगली है और दूसरी अंगूठी। न उंगली पतली होनी चाहिये और न अंगूठी चौड़ी। ज्यो-ज्यो उंगली मोटी होती जाय, आप अंगूठी को बढ़वाते जायँ।

भोजन—जीवन का आधार है। विना भोजनके शरीर अधिक दिन तक नही टिक सकता। पर इसमे भी मध्यवर्ती मार्ग को ग्रहण करना चाहिये। सफलता के मार्ग मे अधिक दिन तक चलना है। उसका काम "सतुआ-पिसान-या चबैना" से न चलेगा, उसे पुष्टिकर और साधारण भोजन मिलना चाहिये। जो व्यक्ति

मितव्ययता के कारण अपने शरीर को उपयोगी भोजन नहीं दे सकता, वह अपनी शक्ति को दिन-ब-दिन क्षीण करता है। तब वह कोई भी ठोस कार्य भलीभाँति पूरा नहीं कर सकता। सफलता प्राप्त करना तब उसके लिए मृग-मरीचिका सी हो जायगी। वह जानबूझकर बीमारी को आमन्त्रित करता है। उसका क्षीण शरीर विषाक्त हो जाता है। अनेको प्रकार के रोग के कीटाणु उत्पन्न होकर उसकी प्रतिभा, बल, शक्ति, सौन्दर्य एवम् बुद्धि का विनाश कर डालते हैं। उसके मस्तिष्क मे अस्थिरता का वास हो जाता है। वह बिगड़े मस्तिष्क का व्यक्ति बन जाता है।

दूसरी ओर बहुभोजी बढ़िया बढ़िया माल उड़ाकर एक दूसरे ही रूप से विनाश की ओर अग्रसर होता है। अजीर्ण से शरीर की जो दशा होती है वह सब पर विदित ही है, इससे अधिक स्पष्ट कहने की यहाँ आवश्यकता नहीं है।

अच्छे काम करने वाले तथा सफल व्यक्ति, बहुत ही साधारण पर पुष्टिकर भोजन करते हैं। वे नियम से एक परिमाण मे पुष्टिकारक भोजन द्वारा शरीर के शक्ति को बढ़ाते रहते है। पेट फुलाने से भोजन का कोई सम्बन्ध नहीं। भोजन परिमाण मे कम चाहिये परन्तु उसमे शक्तिवर्धक वस्तुओं का रहना आवश्यक है।

वस्त्र—धारण करने के सम्बन्ध मे बहुत मतभेद है। वस्त्र केवल शीत, घाम, और वायु से शरीर को बचाने के लिये पहिना

जाता है, न कि अपने धन और वैभव का प्रदर्शन करने वा कराने के लिए। यहाँ दो बातो का त्याज्य आवश्यकीय है। प्रथम दिखावटीपन तथा दूसरा नंगापन। जहाँ नंगेपन से व्यक्तिविशेष कुरुचि का पात्र बनता है, वही दिखावटीपन वाले वस्त्र धारण करने से लोग उसका उपहास करने लगते है।

प्रथा—का पालन करना आवश्यकीय है और स्वच्छता का भी।

पहिनावे मे तरतीब होनी चाहिये। बे-तरतीब वस्त्र पहिनने वाले उपहास के पात्र हो जाते है। वे किसी प्रकार का अपने से आकर्षण नहीं ला सकते, लोग उनसे प्रभावित नही हो सकते। वस्त्र चाहे कम ही कीमत के क्यो न हो परन्तु तरतीबवार हो, समय के अनुकूल हो, परिस्थिति के अनुसार हो शरीर मे खूब फिट हो। पोशाक परिस्थिति के अनुसार ही होनी चाहिये।

इस सम्बन्ध मे बहुत बड़े व्यक्तियो की समता करने की आवश्यकता नहीं है। गांधी जी की लङ्गोटी-धारण यदि एक एम० ए० पास नौकरी ढूँढ़ने निकले तो उसे दफ्तरो के फाटक पर धक्के खाकर वापस लौटना पड़ेगा।

यदि कोई गरीब व्यक्ति सस्ता कपड़ा पहिन ले तो कोई हानि नहीं, परन्तु साफ होना चाहिये। कीमती वस्त्र पहिनने से ही समाज मे प्रतिष्ठा नहीं बढ़ती। जो लोग धनी हैं और वस्त्र के पीछे सहस्रो रुपया स्वाहा कर देते हैं वे जान बूझकर गरीबी को आह्वान करते हैं।

अपार धन-शाली कुबेर भी यदि अपना धन आँख मूँदकर खर्च करने लगे तो वह भी थोड़े ही दिनों में भिखारी बन जायगा। "चाणक्य"!

वस्त्र एवम् आभूषण मे दिखलाने के लिए व्यय किया गया धन, यह साबित करता है कि उक्त धन का मालिक ठोस विचार का व्यक्ति नहीं है। जो विनम्र एवम् सुसंस्कृत व्यक्ति हैं, वे सादगी की ओर झुकते है और झुक रहे हैं। वे धन को तड़क भड़क मे न उड़ाकर अपने सद्गुणों एवम् संस्कृति के बढ़ाने मे खर्च करते हैं। उनके लिए शिक्षा और सभ्यता की उन्नति का प्रश्न प्रधान रहता है और वस्त्राभूषणों से सजने का प्रश्न गौण। वे साहित्य, विज्ञान, कला, व्यवसाय की उन्नति मे ही अपने धन को लगाते हैं।

वास्तविक प्रदर्शन, वस्त्रों वा आभूषणों से नहीं होता। होता है, विनम्रता-पूर्ण व्यवहार से। जो गुण और प्रतिभा से विभूषित है, वे वस्त्र और आभूषण से विभूषित होने की अपेक्षा लाख दरजे अच्छे है। जो समय सजावट और शृङ्गार मे व्यय किया जाता है, वह समय का दुरपयोग है। जिस प्रकार जीवन के हरएक पहलू मे सादगी से फायदा उठाया जाता है, उसी प्रकार पहिरावा के विषय मे भी समझना चाहिये। सादे वस्त्रों से शरीर को सुख मिलता है, मस्तिष्क को शान्ति मिलती है, शरीर के स्वभाविक सौन्दर्य को प्रोत्साहन मिलता है और लोगो मे अभिरुचि उत्पन्न करता है।

मनोरंजन—जीवन का एक बहुत बड़ा आवश्यक अंग है। हर एक व्यक्ति के लिये चाहे वह स्त्री हो या पुरुष मनोरंजन-प्रिय होना अनिवार्य है। परिश्रम करने के मध्य मे थोड़ा-सा मनोरंजन कर लेने से, शक्ति फिर से हरी भरी हो जाती है। इससे शरीर और मस्तिष्क दोनो को लाभ पहुंचता है। मनोरंजन के बाद जब आप गंभीर कार्य मे लगेगें तो आपका चित्त द्विगुणित उत्साह से काम करेगा।

मनोरंजन उस कार्य को कहते है जिससे मन का रंजन हो। जिस काम के करने से मन और शरीर दोनो का बोझ हल्का हो उसी का नाम मनोरंजन है। दिन रात खेल मे लगे रहना, संगीत सुनते रहना अथवा प्रति दिन सिनेमा देखते रहना मनोरंजन नही है। यह एक प्रकार की मानसिक दासता है। दिन भर थके मांदे रहने के बाद तीन घंटे के लिए उसी कोलाहलपूर्ण भीड़ के बीच बैठकर आंख को खराब करना कभी भी मनोरंजन नहीं कहा जा सकता।

जिस काम के करने से आपकी शारीरिक या मानसिक थकावट मिटे, वही मनोरंजन है—चाहे वह साधन कितना ही साधारण क्यो न हो? दिन भर दफ्तर मे काम करते-करते थक जाना स्वाभाविक है। सायंकाल कुछ लोग बागवानी मे लग जाते है, वे उसी मे अपना चित्त लगाते है। इससे मनोरंजन के साथ-साथ स्वास्थ्य-वर्धन का भी काम हो जाता है। मनोरंजन का साधन हल्का ही होना चाहिये। और साथ ही ऐसा भी

होना चाहिये जिससे मानसिक एवम् शारीरिक दोनो अवयवों को स्फूर्ति प्राप्त हो।

मनोनुकूल परिवर्तन भी मनोरंजन का एक अंग है। मानसिक परिश्रम करने वाले थक जाने के उपरान्त शारीरिक परिश्रम की ओर झुकें और शारीरिक परिश्रम करने वाले थक जाने के बाद मानसिक कार्य (पढ़ना, लिखना, चिन्तना) की ओर। इस परिवर्तन से मनोरंजन के साथ साथ कार्य की भी पूर्ति होती है। मनोरंजन प्राकृतिक शक्तिवर्धक औषधि है। इससे मानसिक एवम् शारीरिक स्वस्थ्यता प्राप्त होती है।

थकावट के बाद जो स्थिरता आती है, उसे आराम कहते हैं। उस स्थिरता का आना अत्यन्त आवश्यकीय है। हर एक आत्म-संयमी को प्रतिदिन इतना काम अवश्य करना चाहिये जिससे वह सायंकाल थक कर अधिक से अधिक आराम की इच्छा करे।

थकावट के बाद यों भी नींद अधिक आती है, परन्तु दिन-भर की थकावट के बाद पूरी तरह सोने की सुव्यवस्था करनी चाहिये। यह जानना कि, किसको कितनी नींद की आवश्यकता है, आसान है। प्रति दिन निर्धारित समय पर सो जाना और प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त मे उठ जाना, यह कौन नहीं जानता? प्रत्येक व्यक्ति थोड़े ही दिनो के अभ्यास से इस नियम का अभ्यस्त हो सकता है।

बिछौने पर पड़े-पड़े करवटें बदलना एक दुर्गुण है जिसे

छोड़ देना जरूरी है। जिन्हे ऐसी आदत है उन्हे सोने के घंटों को घटाना चाहिये। जिन्हे अपने जीवन मे उन्नति करना है, उन्हे अधिक देर तक सोना नहीं चाहिये।

हिसाब लगाने पर हमारे जीवन का केवल एक तिहाई भाग काम करने के लिए बचता है। जिसकी पूरी आयु पचास वर्ष की है उसकी आयु मे २५ वर्ष रात्रि और २५ वर्ष दिन होता है। प्रतिदिन दो घण्टा नित्य-क्रिया एवम् दो घण्टा भोजन मे लगाता ही है। इसके अतिरिक्त गप्पबाजी एवम् इधर-उधर व्यर्थ घूमने मे भी दो घण्टे से कम समय मनुष्य बर्बाद नहीं करता। अब इस छः घण्टे के समय को निकाल देने से, ५० वर्ष की आयु का चौथाई भाग अर्थात् साढ़े बारह वर्ष का समय व्यर्थ निकल जाता है। पचीस वर्ष की रात्रि और साढ़े बारह वर्ष की यह अवधि दोनो मिलाकर साढ़े सैतीस वर्ष का समय होता है। शेष साढ़े बारह ही बरस तो बचते हैं। और इसमे भी आलसी मनुष्य कितने ही दिन रविवार, त्यौहार बेकारी, बीमारी, आकस्मिक दुःख, प्रसन्नता आदि के बहाने नष्ट कर डालता है। फिर तो वही पचीस वर्ष की रात्रि वाला समय बच जाता है। यदि आप नियमित अभ्यास द्वारा इस "पचीस वर्ष" मे से कुछ समय बचा ले तो, आप उससे अपने काम करने की अवधि को लम्बी कर सकते हैं। परन्तु जब अनावश्यक रूप से सोते रहेंगे, तो व्यर्थ समय नष्ट करते रहेंगे और इस पचीस वर्ष की 'रात्रि' से कुछ भी समय निकाल नहीं सकते।

भारतीय धर्म-शास्त्र के आदेशानुसार जो व्यक्ति अधिक सोता है वह दरिद्र होता है। यदि पहिले से कुछ धन संचय हुआ रहता है तो इस आदत के आते ही वह भी समाप्त हो जाता है।

सोने और आराम करने—दोनों मे अटूट सम्बन्ध है। परन्तु आराम के स्थान पर सोने का आधिपत्य नहीं होना चाहिये। दिन रात सोना आराम करना नहीं कहलाता। अकबर वादशाह केवल छः घंटा ही सोया करता था। कहा गया है कि कुत्ते की नींद सोना चाहिये। संसार प्रसिद्ध नेपोलियन तोप के मुंह के पास सो लेता था। कुछ लोग इच्छाशक्ति को इस प्रकार काबू में रखते हैं कि जिस समय उठने का निश्चय करके सोते हैं दूसरे दिन ठीक उसी समय उठ जाते हैं। सोने मे भी मितव्ययी होने की आवश्यकता है। आराम के घंटे का सदुपयोग करना ही सोना कहलाता है।

'समय' की अवधि सभी के लिए एक-सी रहती है। सभी व्यक्ति के लिए चाहे वह आलसी हो या कामकाजी, दिन रात के घंटे बराबर होते है। यदि बारह घंटे का दिन होगा तो सबके लिये होगा, यह नहीं कि राम के लिए बारह घटे का हो और श्याम के लिए ग्यारह घंटे का। फिर भी कितने आश्चर्य की बात है कि एक कामकाजी काम करते-करते दिन डूबने लगता है तो वह सूर्य पर झुंझला उठता है। वह चाहता है कि सूर्य कुछ और देर तक आकाशमण्डल मे चमकता रहता

तो अच्छा होता, दूसरी ओर उस आलसी व्यक्ति को देखिये जो दिन भर बैठा मक्खी मार रहा है, उसका दिन ही नहीं बीवता। वह सूरज को कोसता रहवा है कि वह क्यो नही अस्ताचल मे विलीन हो जाता ?

प्रेमियो की रात बीतते देर नही लगती और दुखियों के लिए वही रात पहाड़ के समान हो जाती है।

हमे चाहिये कि समय का एक क्षण भी व्यर्थ न जाने दें। इस सम्बन्ध मे कुछ अधिक लिखना व्यर्थ है। समय ही धन है, समय ही शक्ति और बल है। खोया हुआ धन प्राप्त किया जा सकता है परन्तु खोया हुआ समय प्राप्त नही किया जा सकता। अभी आपने जितना समय पलक गिराने मे विता दिया है वह समय बीत गया और वह फिर कभी न आवेगा।

समय का सदुपयोग करने के लिए उसका विभाजन कर लेना आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति को काम, भोजन, आराम, मनोरजन और व्यायाम के घंटे, निर्धारित कर लेना चाहिये।

प्रातःकाल उठते ही नित्य-क्रिया कर लेना आवश्यक है, इसमे विलम्ब करने से फिर दिन भर का सारा कार्यक्रम अव्यवस्थित हो जाता है। समय के पहिले किसी कार्य को आरम्भ कर देने मे किसी प्रकार की घवराहट नहीं रहती। घवराहट के कारण समय का वड़ा दुरपयोग होता है। यदि आप समय से स्टेशन पर जांय तो ट्रेन अवश्य मिल जायगी, परन्तु समय

समाप्त होते-होते आप घबड़ाकर जब स्टेशन की ओर दौड़ते हैं, तब आपकी जो दशा हो जाती है, उसे आप अपने से ही पूछिये। कभी बच्चे रेल पर सवार हो जाते हैं तो बाप छूट जाता है और घबड़ा कर ट्रेन में चढ़ने का उपक्रम करते समय ट्रेन दुर्घटना का शिकार भी हो जाता है। प्रति वर्ष दो चार व्यक्ति इस परिस्थिति में पड़कर मरते हैं। समय का व्यय, अपव्यय, सद्व्यय, मितव्यय आदि प्रश्नों पर मनुष्य को गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिये। प्रधान लक्ष्य के पूरा करने वाले को गौण लक्ष्यों को भूलना पड़ेगा। हम जीवन में कई एक ध्येय एक साथ लेकर चलते हैं। इन ध्येयों में हमें कांट-छांट करने की आवश्यकता है। जितने ही अधिक ध्येय होंगे उतना ही अधिक समय उनकी पूर्ति में लगाना पड़ेगा। फलतः ऐसा भी संभव है कि उनमें से एक की भी पूर्ति न हो सके और यह क्षणिक जीवन योंही बीत जाय।

सोचने और समझने में, भाषण देने में, चलने में, खाने में, हँसने और रोने में—अर्थात् जीवन के प्रत्येक पहलू में मितव्ययी बनने की आवश्यकता है। अधिक बोलने से शक्ति क्षीण होती है। मस्तिष्क में अशान्ति के बादल छाये रहते हैं। काम से काम रखो। व्यर्थ के काम में अपनी मानसिक आर्थिक वा शारीरिक, किसी भी शक्ति का अपव्यय न करो।

समय की ठीक मितव्ययता—समय से खाने, समय से सोने और समय से काम करने में है।

स्फुरणा के सम्बन्ध मे मितव्ययी बनने के लिये अच्छे चाल-चलन का होना आवश्यक है। दुनिया मे जितने भी दोष हैं, वे स्फुरणा के दुरुपयोग से ही उत्पन्न होते हैं। लोग छोटे-छोटे कामो में भी अपनी सारी शक्ति लगा बैठते हैं। दोपहर के भोजन मे दूध भी शामिल किया जाय या नहीं, इस साधारण-सी समस्या पर लोग घंटो विचार किया करते हैं। फिर भी किसी निश्चय पर नहीं पहुँचते। एक कहावत है:—

"जहाँ काम आवे सुई क्या करे तरवार।"

अर्थात् जहाँ सुई काम दे सकती है, वहाँ तलवार की क्या आवश्यकता है? जो काम थोड़ी शक्ति लगाने से हो सकता है उससे अधिक लगाना ठीक नहीं है। स्फुरण-शक्ति का सबसे अधिक ह्रास उस समय होता है जब कि आप क्रोध या आवेश मे आ जाते है। आपकी मानसिक-शक्ति का क्रोध आपका एक प्रबल शत्रु है। आपको निग्रह की बहुत बड़ी आवश्यकता है। शान्त प्रकृति का व्यक्ति जीवन के प्रत्येक अङ्ग मे महत्ता प्राप्त करता है।

दोषपूर्ण कार्यों मे अपनी शक्ति का दुरुपयोग करना भले आदमी का गुण नहीं है। जीवन-युद्ध मे आपको पराजित करने के लिए छोटा दोष भी बड़े शत्रु के रूप मे सामने आ जाता है। प्रत्येक अनुचित कार्य का फल कर्त्ता को तुरन्त या थोड़े समय के अनन्तर मिल जाता है। अपनी निम्न प्रकृतियों के साथ सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति, पद पद पर अपदस्थ होता

रहता है। हाँ यदि आप स्फुरणा के साथ साथ मितव्ययी बन कर सत्कार्यों में ही लगे रहे तो आप विकाश-पथ पर बिना किसी रुकावट के आगे बढ़ सकते हैं।

'मितव्ययता' का सम्बन्ध केवल 'धन' से नहीं है, वरन् सभी प्रकार के धनों से है। इसका सम्बन्ध लोक और परलोक दोनों के मार्ग को प्रशस्त करने वाली वस्तुओं से भी है। रुपया पैसा सांसारिक पदार्थ है, इसी से हमारा 'संसार' बनता है और इसी से हमारा 'संसार' बिगड़ता भी है। अतः इस सांसारिक वस्तु पर ही पहिले अपनी मितव्ययता का अनुशासन कायम करना चाहिये। जब आप इस तुच्छ वस्तु पर अपना प्रभुत्व जमा लेंगे तब आपके चारित्र्य-बल को प्रोत्साहन मिलेगा, तब आपको सफलता प्राप्त होगी। आज आपने पैसा खोया, कल अठन्नी, परसों रुपया खोया और अब नोटों के तुड़ाने की बारी आ गई। ठीक इसी तरह से आप चरित्र-निर्माण-सम्बन्धी छोटी-छोटी बातों की अवहेलना करते-करते बड़ी बातों की अवहेलना करने लग जाते हैं।

पहिले छोटी छोटी बातों पर विचार कर छोटी छोटी गलतियों को सुधारिये—फिर बड़ी बड़ी बातें स्वयम् ही ठीक हो जायँगी।

'मितव्ययता के चार रूप हैं। उदारता, पहुँच, पूर्णता, और मौलिकता।

उदारता—मितव्ययता का एक प्रभावशाली अङ्ग है। इससे

आप बहुत दूर नहीं बढ़ने पाते। बीच मे ही रुक जाते हैं। यह मध्य का ही रास्ता है। नरम और गरम दो प्रकृतियो के बीच एक तीसरी भी प्रकृति होती है। इसे शीतोष्ण कहते हैं! इसी शीतोष्ण प्रकृति का नाम उदारता है। अनावश्यकीय तथा हानिकर बातो से किनारा कसे रहने मे उदार प्रकृति से बहुत कुछ सहायता मिलती है। सच्चा उदार पुरुष दोषो से अपनी रक्षा करता रहता है। जलती हुई आग मे हाथ डाल देना हानिकर है। उदार प्रकृति का मनुष्य आँच पर ही अपना हाथ सेंक कर अपना काम चला लेता है। दोष एक अग्नि है जो अपने भीतर प्रवेश करने वाले को जला देती है। जो उदार हैं वे उस दोषरूपी अग्नि की आँच पर हाथ रखकर अनुभवमात्र से चैतन्य हो जाते हैं।

धूम्रपान, जूआ, सुरापान तथा इस प्रकार की अन्य खराबियाँ अनादि काल से मनुष्यो के पीछे लगी हुई हैं परन्तु, इनसे आज तक किसी का स्वास्थ्य सुधरा हो, किसी को कुछ धन मिला हो, किसी की समृद्धि हुई हो, यह बात कभी भी सुनने मे नहीं आई। जो मनुष्य इनसे बचकर चलेगा वह उस मनुष्य से जो कि इनसे सटकर चलेगा, सदा आगे रहेगा। स्वस्थ्य, दीर्घजीवी वे ही व्यक्ति होते हैं जो उदार प्रकृति के होते है। उदारता से जीवन-शक्ति की रक्षा होती है। "अति सर्वत्र वर्जयेत्"। अति से सब जगह हानि उठानी पड़ती है। भोजन मे, खानपान मे, आराम मे, भोग विलास में खेल

कूद मे अर्थात जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अति न कर जो उदार बने रहते हैं—अपनी शक्तियो से भरपूर लाभ उठाते हैं। अनुदार व्यक्ति अपने आप को चौपट करता है। उसकी अनुदारता ही उसे रसातल मे भेज देती है। अनुदारता से स्फुरण-शक्ति का ह्रास होता है, क्षमता मे कमी पड़ जाती है। अनुदार अपने चरम लक्ष्य तक पहुँचते पहुँचते अथवा बीच मे ही ठोकर खाकर गिर पड़ता है। यदि पहुँच भी गया तो अन्त तक पहुँचते ही समाप्त हो जाता है।

परिपक्वता या पूर्णता—का भी सफलता में बहुत बड़ा हाथ रहता है। अपरिपक्व आदमी कभी भी सफल नहीं होता। सफलता उसी के पास जाती है जो परिपक्व होता है। संसार में चातुर्य की उत्पत्ति का आधार स्फुरणा की एकाग्रता ही है। चतुराई से योग्यता, योग्यता से बुद्धिमत्ता, और बुद्धिमत्ता से महान शक्ति की प्राप्ति होती है। मनुष्य उस कार्य मे जिसमे उसका विशेप झुकाव रहता है अधिक चतुर होता है क्योकि उसका मस्तिष्क सदा उसी काम के चिन्तन मे लगा रहता है। चतुरता के उत्पत्ति का उद्गम मित-व्ययी मस्तिष्क है। चतुराई से सफलता मिलती है। चतुर व्यक्ति को ही नौकरी मिलती है। यह सोचने की बात है कि जो चतुर न होगा उसे कौन काम देगा ? हाँ यदि मालिक बहुत बड़ा दानी है तो बात ही दूसरी है। परन्तु किसी औद्योगिक-

विभाग की नौकरी में वह व्यक्ति जो चतुर नहीं है अधिक दिन तक नहीं टिक सकता।

चतुराई की प्राप्ति, विचार एवम् ध्यान की एकाग्रता से होती है। जिनके जीवन का कुछ ध्येय नहीं है उन्हें आजीविका का आदरपूर्ण साधन नहीं मिलता। अपरिपक्व व्यक्ति छोटा से छोटा काम भी पूरा नहीं कर सकता। कारण यह है कि उसमें चतुराई की मात्रा बहुत थोड़ी होती है।

लोग झाड़ू देना बहुत आसान काम समझते हैं परन्तु हम कहते हैं कि चतुराई के साथ झाड़ू देने वालों की संख्या सौ पीछे दस भी नहीं है। किसी काम को ठीक तौर से पूरा करने के लिए एक या दो रास्ते होते हैं, इससे अधिक नहीं। परन्तु उसे बिगाड़ने के लिए हजारों रास्ते होते हैं। चतुराई उस ठीक रास्ते को खोज निकालने में है। एक हजार रास्ते में एक या दो रास्ता ढूंढ़ निकालना अपरिपक्व व्यक्ति का काम नहीं।

कच्चा आदमी भटक भटक कर मर जायगा। यहाँ तक कि यदि कोई संकेत से उसे ठीक मार्ग बता देगा, तो भी वह उसको न पा सकेगा। कभी कभी तो अपरिपक्व आदमी इसलिये गलत रास्ता पकड़ लेता है कि वह उसे जानता नहीं। परन्तु प्रायः ऐसा नहीं होता। अपरिपक्व व्यक्ति गलत रास्ते को अनजान में नहीं पकड़ता, वरन जान बूझकर उसे ठीक समझते हुए पकड़ता है। विचार-शून्यता एवम् अपरिपक्वता एक साधारण अवगुण है।

जब आप को परिपक्वता की प्राप्ति हो जाती है तब आप

किसी भी काम तक अपनी पहुँच कर सकते हैं। किसी काम तक अपनी पहुँच कर लेने के माने ही यह है कि आप में स्फुरणा है, आप में परिपकता एवम चतुराई है। जब आप अपनी साधना मे सफलीभूत हो जायँगे तब आपके लिए कोई कार्य दुष्कर नहीं रह जायगा। जिस प्रकार कुछ जमीन ऊसर हो जाती है और वहाँ कुछ भी उपज नहीं होती, ठीक उसी प्रकार कुछ लोगो का मस्तिष्क भी ऊसर हो जाता है। परन्तु साधना एक ऐसी वस्तु है जो उस ऊसर मस्तिष्क को भी उपजाऊ बना देती है। मनुष्य समाज 'अच्छी' या 'अच्छे' का स्वागत करता है न कि इसके विपरीत का।

प्रकृति का यह गुण है कि जो एक बार झुका वह धराशायी अवश्य होगा। परन्तु धराशायी होकर भी वह खड़ा हो सकता है, इसमे कोई सन्देह नहीं। केवल दोष को दूर करना होगा। पाप मार्ग से हटना होगा। निन्दनीय कार्यों का परित्याग करना होगा। आत्म-सम्मान के मार्ग की ओर प्रवृत्ति करनी होगी।

जो साधक हैं वेही खोज करते हैं, अनुसंधान करते हैं, अन्वेषण करते हैं और नया मार्ग निकालते है। वे कभी अनुत्तीर्ण नही हो सकते। कारण वे विकाश-पथ पर चल रहे है। उनके पास एक से एक नई नई योजनाये है। उन्हे चालू करने के लिए नये नये उपाय हैं। नयी आशाये हैं और उनका जीवन परिपक्क एवम् उत्साहमय है। वे विशाल मस्तिष्क के व्यक्ति हैं। उनके लिए

सब कुछ साध्य है। जब आदमी अपने व्यापार, काम और उपाय की उन्नति नहीं करता, तब वह विकास-मार्ग से च्युत हो जाता है। उसके मस्तिष्क की दशा वृद्ध व्यक्तियों की सी हो जाती है जो केवल मृत्यु की बाट जोहते रहते हैं। साधक व्यक्ति का मस्तिष्क उस नदी के समान है जो कभी भी नहीं सूखती। साधक व्यक्तियो के मस्तिष्क मे सदा नई नई बातें आया करती है।

मौलिकता—साधन का एक प्रधान मार्ग है। जहाँ मौलिकता है, वहीं बुद्धिमत्ता और प्रकाश दोनो है। आप जो भी कार्य करें, उसके साधना के मार्ग मौलिक तथा आपके सोचे हुए हो। इसका यह मतलब नहीं कि आप औरो के अनुभव से लाभ न उठावें, वा औरो के अनुभव को ठुकराते रहे, परन्तु आँख मूँद कर उसकी नकल न करें। मौलिक मार्ग का अवलम्बन करने वाला व्यक्ति शीघ्रातिशीघ्र उन्नति के शिखर पर पहुँच जाता है। यदि आप अपने खोजे हुए मार्ग पर चलेंगे तो यह स्वाभाविक है कि आपको आरम्भ मे कोई देख न सकेगा, परन्तु उसके पूरा हो जाने पर सारे संसार मे आपके मार्ग की प्रसिद्धि हो जायगी। आप मनुष्य-समाज के एक सच्चे उद्धारक माने जायगे। वही संसार का सब से बड़ा परोपकारी है जो अपने आपको सुधारता है, जो अपनी उन्नति के साथ-साथ संसार की भी उन्नति करता है।

प्रत्येक व्यक्ति को अपने ध्यान को इधर उधर में नष्ट न

करना चाहिये। अपने काम में लगे रहना चाहिये। इसी से वह अपने को सफल बना सकता है। जब उसे सफलता प्राप्त हो जायगी तो वह संसार का एक आभूषण समझा जायगा, वह पृथ्वी का एक रत्न माना जायगा। मनुष्य-समाज उसे अपना पथ-प्रदर्शक समझेगा।

अपने मे सर्वदा मौलिकता लानी चाहिये। ईश्वर इसमे अवश्य सहायक होगा। सच्चे मार्ग से चलने वालों को ईश्वर ने सर्वदा सहायता दी है।

सफलता प्राप्ति के मदिर का दूसरा स्तम्भ आपके समक्ष रख दिया गया है। इस स्तम्भ का नाम है मितव्ययता। इसका निर्माण वे ही कर सकते हैं जो मौलिक ढंग से बताये गए मसाले को एक मे मिलाकर अपनी स्फुरण-शक्ति से इसकी नीव को डालने के लिये तय्यार हो।



चारित्र्य बल

सफलता प्राप्त करना कोई सरल काम नहीं है। सफलता एक ऐसी वस्तु है जिसे आप साधारण मूल्य देकर नहीं खरीद सकते। जहाँ बुद्धिमत्तापूर्ण उद्योग से इसकी प्राप्ति का मार्ग बताया गया है, वहीं आपको यह भी समझ लेना चाहिये कि बिना चारित्र्य-बल के आप उस मार्ग पर एक पग भी नहीं चल सकते।

ऐसे होंडी काठ की, चढ़े न दूजी बार।
फेर न ह्वै है कपट सो, जो कीजे व्यापार॥

जिस समय मनुष्य अनीतिपूर्ण मार्ग से धन कमाने का निश्चय करता है, उसी समय वह अपनी असफलता को भी पास

भुला लेता है। और तब उसका उपाय तथा असफलता दोनो साथ साथ चलने लगते हैं। सम्भव है कि कुछ देर तक उपाय आगे आगे दौड़े परन्तु असफलता उसका पीछा नहीं छोड़ सकती। एक न एक समय वह भी अवश्य पहुँच जाती है।

जितने भी व्यक्ति बिना उचित मूल्य दिये धन प्राप्त कर रहे हैं या एक देकर पाँच लेने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे चाहे जानें या न जानें परन्तु वे कपट का ही व्यापार कर रहे हैं। जो धन प्राप्ति के लिए ऐसी योजनायें तैयार करते रहते हैं जिसमे काम कुछ भी न करना पड़े पर लाभ खूब हो—वे धूर्तता कर रहे हैं और ऐसे धूर्तों को चोरों, बदमाशो, लुच्चों, और डाकुओ से किसी प्रकार कम न समझना चाहिये।

चोर किसे कहते हैं? चोर वही है जो विना परिश्रम किये दूसरे के धन से धनी बनना चाहता है। उसका वह कार्य गैर-कानूनी समझा जाता है। आजकल के सुगन्धित तैल वेचने वालो को ही ले लीजिये। एक अद्धा तैल तय्यार करने मे उनको कुल दस पैसे की लागत लगती हैं, परन्तु उसपर एक सुन्दर लेबुल लगाकर वे उस अद्धे का कम से कम बारह आना वसूल करते हैं। आप यह न समझें कि यह भी एक व्यापार है, यह तो गैर-कानूनी चोरी से बढ़कर घृणित चोरी है। चोर तो एक दो व्यक्तियो को रात्रि के अन्धकार मे हानि पहुँचाता है परन्तु ये चोर दिनदहाड़े लूट मचाते है, आँखो मे धूल झोंक सहस्रो को लूटकर उनका बाल श्वेत कर देते हैं। आप जनता से जितना वसूल करे उतने का

माल उन्हे दे—तब तो वह व्यापार स्थाई हो सकेगा अन्यथा वह बरसाती नदी के समान होगा। जितने भी ठोस नीति पर चलने वाले व्यापार है, उनका सिद्धान्त यही रहता है कि वे एक उचित सीमा तक लाभ लें। वे अन्धाधुन्ध नही मचाते। चीना रेशम को काशी सिल्क कहकर नहीं वेचते। वे मूँगफली वा मट्टी के तैल पर तयार किया तैल "महा सुगन्धिराज तैज़" कहकर नहीं वेचते।

कोई भी काम आप करें उसका फल और प्रतिफल दोनो आपको मिलेगा। जो व्यक्ति संसार को मूर्ख समझ उसे अपना 'शिकार' वनाता है वह संसार का सब से वड़ा पापी है। वह एक ऐसे मरुस्थल मे घुट घुटकर मरेगा जहाँ एक बूँद भी जल न होगा। योग्यतम, और इमानदार ही अपने लक्ष्य की चरम सीमा तक पहुँचता है, वे-इमान तथा अयोग्य पद-पद पर ठोकरें खाता रहता है। वेइमान का अन्त, हाँ यदि वीच मे उसने अपना मार्ग नहीं वदला तो घोर दुःखमय. निराशापूर्ण, तथा अन्धकार-जनक होता है। उसके प्रयत्न ही उसे नाश मार्ग की ओर ले जाते हैं।

विना चारित्र्य-वल के मितव्ययता तथा स्फुरणा दोनो वेकार है, परन्तु चरित्र की सहायता पाते ही, मितव्यता एवम् स्फुरणा दोनो द्विगुणित शक्ति से काम करने लगती है। जीवन मे कोई क्षण ऐसा नही व्यतीत होता जव कि आपका चारित्र्य-वल उसमे अपना प्रकट प्रभाव न प्रदर्शित करता हो। चारित्र्य-वल प्रति-क्षण आपके साथ रहता है। आपके व्यवहार की त्रुटियों को यह जड़ से

उखाड़ फेंकता है, क्योंकि चारित्र्य-बल मे बहुत बड़ी शक्ति है। एक ओर असंख्य पशु-बल एवम् अमानुषी शक्तियाँ रहती हैं और दूसरी ओर एक दुबला पतला मनुष्य अपने चारित्र्य-बल के आधार पर खड़ा रहता है। फिर भी पशु-बल और अमानुषी शक्तियो को मुह की खानी पड़ती है।

चरित्रवान के लिए प्रकृति सदा अनुकूल रहती है। वातावरण अनुकूल हो जाता है, परिस्थिति अनुकूल हो जाती है। केवल समाज-संगठन का ही आधार चारित्र्य-बल पर नहीं है, वरन् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड चारित्र्य-बल के आधार पर टिका हुआ है। चरित्रवान व्यक्ति एक अजेय दुर्ग के समान है। वह एक ऐसा महान् वृक्ष है जिसकी जड़ें भू-गर्भ तक पहुँची हुई रहती हैं। विपत्तियों के भयङ्कर से भयङ्कर झोंके उसे नहीं उखाड़ सकते।

दृढ़ एवम् पूर्ण बनने के लिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे आप को अपने चारित्र्य-बल का संगठन करना पड़ेगा। यदि आप किसी भी अङ्ग मे असंगठित रहेगे तो हरएक क्षेत्र मे असंगठित हो जायँगे। चारित्र्य-बल आपकी रक्षा के लिए ढाल का काम देता है। वह ढाल पूर्णाङ्ग मे ठीक होनी चाहिये। यदि उसका कोई भी अङ्ग क्षीण रहा तो उसी अङ्ग से दोष-रूपी तलवार आपके सफलता-रूपी शरीर पर वार कर बैठेगी।

वह व्यक्ति जो अपने मालिक की अनुपस्थिति मे भी यह समझकर काम करता है कि मालिक की आँखें उसे काम करती देख रही है, तो वह व्यक्ति कभी भी छोटी स्थिति मे नहीं

रह सकता। इस प्रकार के चरित्र से, वह शीघ्र ही उन्नति की उप-जाऊ भूमि मे पहुँच जायगा।

मालिक की अनुपस्थिति मे जो काम मे ढिलाई कर देता है, मालिक का धन और समय नष्ट करने के प्रयत्न मे रहता है वह शीघ्र 'वेकारो' की श्रेणी मे जा मिलता है।

जिनके चारित्र्यवल की नींव गहराई तक नहीं गई है वे मौका पड़ने पर झूठ बोलते है, वेइमानी कर बैठते हैं। परन्तु जिनका चारित्र्यबल सुदृढ़ नींव पर खड़ा है, वे लाख हानि होने पर भी झूठ या वेइमानी की शरण नहीं लेते। इसमे पहिले प्रकार के व्यक्ति शीघ्र पतनोन्मुख हो जाते हैं।

असत्यवादी होने से वचने के लिये कुछ त्याग करना पड़ता है, पर ऐसे त्याग से हम प्रकाश-मार्ग की ही ओर जाते है। जो ऐसा त्याग नहीं करते वे चरित्रवानो की श्रेणी मे नहीं आ सकते। ऐसे लोगो को निम्न श्रेणी के धोखेवाजो, तथा पतित व्यवसाइयो के ही मध्य स्थान मिलता है। जब तक कोई व्यक्ति भाव, शब्द या कर्म से शुद्ध नहीं होता, किसी को धोखा न देने का निश्चय नहीं करता, सत्यवादी होन का निश्चय नहीं करता, तब तक वह व्यक्ति, दुश्चरित्रता से विमुक्त हुआ नहीं समझा जाता। जो व्यक्ति मनसा, वाचा, कर्मणा से शुद्ध होता है, वही चरित्रवान है और ऐसे चरित्रवान की सब लोग आदर करते हैं। उसे कोई वेइमान-धोखा नहीं दे सकता। संसार की दुष्ट-शक्ति के

प्रहारो से उसका चारित्र्यबल-रूपी कवच सर्वदा रक्षा करेगा। स्वार्थियो की तीर उसे न चुभेगी।

एक झूठ बोलने वाला व्यापारी आप से कह सकता है, भइया अज कल इमानदारी से किसी की उन्नति होती है ? परन्तु उसकी बात पर विश्वास कैसे कर लिया जाय जब कि उसकी बातो से यह स्पष्ट प्रकट है कि उसने इमानदारी के साथ कभी काम किया ही नहीं। ऐसे आदमियो को 'ईमान' का अर्थ ही नहीं मालूम रहता। फिर उसका विश्वास करना ही अनुचित है। उसके वक्तव्य का आधार ही बेइमानी और झूठ पर अवलम्बित है। ऐसे व्यापारी व्यापार मे कभी भी सफल नहीं होते और उनका शीघ्र दिवाला निकला जाता है।

जो व्यक्ति खुले-आम यह कहता फिरता है कि आजकल इमानदारी का युग नहीं है, वह स्वयम् इमानदार नहीं होता। ऐसा व्यक्ति इमान का पक्का शत्रु होता है। उपरोक्त वक्तव्य देकर वह अपनी दशा का लोगो पर दिग्दर्शन कराना चाहता है। जो व्यक्ति रास्ता चलते २ एक क्षण के लिए भी सीधा मार्ग छोड़ देगा, वह अवश्य टेढ़े मार्ग जायगा। आज-कल इमानदारी का युग नहीं है—ऐसा कहने वाला व्यक्ति समझता है कि उसके व्यापार करने का ढंग सर्वोत्तम है, उसका पड़ोसी उसके बराबर क्षमता नहीं रखता। चारित्र्य-बल सम्बन्धी बातो की गैर-जानकारी का ही यह फल है कि लोगो के हृदय मे इस तरह की विरोधात्मक बातें घुस जाती हैं।

मनुष्य मनुष्य के बीच ऐसा व्यवहार होना चाहिये जिससे संघर्ष उत्पन्न न हो, परन्तु यह चरित्रवान से ही हो सकता है। बिना उसके अन्य कोई इस कार्य को नहीं कर सकता।

चरित्र ही मनुष्य समाज का मेरुदण्ड है और यही मानव-प्रसाद का स्तंभ है। इसके अभाव में विश्वास और आगे उन्नति करने का मार्ग अवरुद्ध हो जायगा। फलतः व्यापारी समाज का पतन निश्चित है। जिस तरह झूठा व्यक्ति संसार के सभी व्यक्तियों को झूठा समझ कर उनके साथ झूठा व्यवहार करता है, ठीक इसी तरह चरित्रवान व्यक्ति सभी को चरित्रवान समझ कर उनपर विश्वास करता है। उसकी आँखें और खुले हुए हाथ धोखेबाजी का अभ्यास नहीं करते। इसलिये उसके साथ धोखेबाजी करने का सहसा किसी को साहस नहीं होता। लोगों पर विश्वास करो, फिर तुम भी लोगों के विश्वासपात्र बन सकते हो। ठीक काम करने वाला व्यक्ति अपने आस पास के लोगों पर धाक जमा लेता है, उन्हें शीघ्र ही और अच्छा बना देता है। एक कहावत है कि खरबूजे को देख कर खरबूजा रंग पकड़ता है। ठीक इसी तरह एक मनुष्य पर दूसरे मनुष्य के स्वभाव का बड़ा प्रभाव पड़ता है। चरित्रवान के प्रभाव में पड़कर लोग चरित्रवान तथा पवित्र के प्रभाव से लोग पवित्र हो जाते हैं। चरित्रवान व्यक्ति अपने साथ एक ऐसी प्रभुता रखता है जो उसे सदा प्रोत्साहित करती रहती है। वह साधारण जन-समाज से कुछ ऊपर ही उठा हुआ रहता है। फलतः छोटापन, नीचता, असत्यता आदि कायरतापूर्ण

दोष उसके सामने टिक तक नहीं सकते। ऊँचे से ऊँचा बुद्धिमान पुरुष चरित्रवान के चरित्रवल के सामने वरावरी में नहीं टिक सकता। मानव समाज के इतिहास में, और संसार की दृष्टि मे चरित्रवान व्यक्ति का जितना मूल्य है उतना बुद्धिमान का नही। चरित्रवान होना प्रकृति का एक सवसे बड़ा वरदान है। इसी गुण से 'बीरता' की उत्पत्ति होती है। चरित्रवान ही वीर होता है। उसे ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है। बुद्धिमान कभी-कभी चिन्तित भी हो जाता है, उसकी प्रसन्नता जाती रहती है, परन्तु चरित्रवान कभी भी अपनी प्रसन्नता नही खोता। व्याधि, आपत्ति, वा मृत्यु—इन तीन मे से एक या तीनो, चरित्रवान व्यक्ति के स्थाई सन्तोष को नही छीन सकते।

शुद्ध चरित्र का व्यक्ति चार सीढ़ियो से होकर उत्थान-मन्दिर मे घुसता है। प्रथम वह सबका विश्वासपात्र वनता है। विश्वासपात्र बन जाने पर लोग उसपर निर्भर रहने लगते हैं, विश्वासपात्र से निर्भरता, फिर निर्भरता से उसकी प्रसिद्धि फैलती है, और प्रसिद्धि से उसे सफलता मिलने लगती है।

वेइमानी का इससे ठीक उलटा प्रभाव पड़ता है। जब वह लोगों का विश्वास खो वैठता है तो लोग उसपर संदेह करने लगते है। संदेह से उसपर कोई निर्भर नही रहता, जिससे अपयश फैल जाता है और वही अपयश उसकी असफलता का मूल कारण वन जाती है।

चरित्र्य-बल का स्तम्भ इन चार पदार्थों से बना है।

१ इमानदारी ३ उपयोगिता

२ निर्भयता ४ अजेयता

इमानदारी सफलता की ओर ले जाने वाला सबसे ठीक मार्ग है। बेइमान के जीवन मे एक दिन ऐसा भी आता है जब कि वह अपनी बेइमानी के लिए पश्चात्ताप करता है, परन्तु इमानदार को कभी भी ईमान पर स्वतः के लिये पश्चात्ताप करने की आवश्यकता नही पड़ती। इमानदार यदि अपने व्यापार मे असफल हो जाय जैसा कि स्फुरणा, मितव्यता तथा सुचारु रूप से कार्य-संचालन के अभाव मे सभव है, तो भी उसे यह सोचकर किसी भी प्रकार का पश्चात्ताप नही करना चाहिये कि उसने किसी के साथ बेइमानी नही की है। अंधकारपूर्ण जीवन मे भी ईमान ही उसे प्रकाश दिखायेगा।

मूर्ख समझता है कि बेइमानी से वह सफलता के द्वार पर शीघ्र पहुँच जायगा। यही कारण है कि ऐसे लोग बेइमानी का व्यवहार किया करते हैं। बेइमान अदूरदर्शी होता है। पियक्कड़ की भाँति वह तात्कालिक आनन्द को उठाना चाहता है, पर उसे यह नहीं मालूम होता कि क्षणिक आनन्द के झोके के बाद जब उसपर नशा चढ़ बैठेगा तो वह गन्दी नालियों में मुँह के बल गिर पड़ेगा। बेइमानी से अधिक लाभ उठाना कभी भी उचित नही। इससे उसके चरित्र के अन्तर्गत अनेको दोष आ जाते है। फलतः उसके व्यवसाय को

ईंट खसकने लगती है। जब तक वह लाभ पाता रहता है तब तक वह अपनी बुद्धिमानी पर खूब प्रसन्न होता है। सोचता है कि वह लोगो की आखो मे खूब धूल झोक रहा है। परन्तु उसे यह गांठ कर लेनी चाहिये कि बेइमानी से प्राप्त किया गया धन उसे मय-ब्याज के लौटाना पड़ेगा। इससे बचने का कोई मार्ग नहीं। जिस प्रकार ऊपर को फेंका हुआ रोड़ा नीचे गिरता है, उसी प्रकार बेइमानी के आधार पर बढ़ाया गया व्यवसाय अवश्य गिरेगा।

जो व्यापारी अपने कर्मचारियो को खराब चीज को अच्छी कह कर बेचने की सलाह देता है, वह अपने आस-पास अविश्वास, संदेह, घृणा का वातावरण उत्पन्न कर विपत्ति का आह्वान करता है। उसके कर्मचारी थोड़े ही दिनो मे उसे ही स्वयं धोखा देने लग जाते है। इस तरह के दूषित वातावरण मे सफलता कहाँ से मिल सकती है? बरबादी का घुन तो आरंभ से ही ऐसे व्यवसाय मे लग जाता है और फलतः उसके पतन का समय भी निश्चित हो जाता है।

इमानदार व्यक्ति भी असफल हो सकता है, पर उसकी असफलता भी प्रतिष्ठात्मक होगी। इससे उसके चरित्र तथा ख्याति मे कोई धब्बा नही लगेगा। उसकी असफलता, जिसका कारण और बहुत सी बाते होती है, उसे पहिले से अधिक उज्ज्वल तथा उसके मनोनुकूल कार्य की ओर ले जाकर उसे सफल बनायेंगी।

स्पष्ट व्यवहार की सभी लोग प्रशंसा करते है। बेइमान भी इमानदार की प्रशंसा करता है। जो प्रत्येक प्रकार के व्यवसायिक व्यवहार मे सबके साथ ठीक २ वर्ताव करता है, सत्य भाषण करता है वचन का पालन करता है, चाहे उसे हानि ही क्यो न उठानी पड़े, उसे किसी खराबी से डरने की आवश्यकता नही। क्योकि उसके कर्मों का फल उसके एवम उसके ग्राहको के प्रतिकूल न होगा।

निर्भयता इमानदारी की सहचरी है। इमानदार की आँखें साफ होती हैं। वह अपने साथियो की मुखाकृति को देखता है। उस की बातें सीधी तथा तथ्यपूर्ण होती है। झूठा और मक्कार अपनी गरदन टेढ़ी रखता है, उसकी दृष्टि शरारत से भरी रहती है। वह किसी की आँख मे आँख मिलाना नहीं देख सकता। उसके बाते सन्देहात्मक होती है कारण वे गोलमटोला तथा विश्वास-हीन होती है।

जब आपने अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया तब आपको डरने की कोई आवश्यकता नही। आपके समस्त व्यापारिक सम्बन्ध तब सुरक्षित तथा दृढ़ हो जाते है। आपके उपाय और कर्म दिन के प्रकाश का सामना कर लेगे। यदि आप पर कोई कठिनाई आ जायगी और आप पर जब ऋण लद जायगा तब भी लोग आपका विश्वास करेगे, आपको भुगतान करने के लिए तंग नहीं करेगे, बस राह देखेगे। बेइमान अपना ऋण चुकाना नहीं चाहते और साथ ही लम्बी चौड़ी बातें भी हांकने लगते है, वे सदा डरते

रहते हैं। इमानदार कभी ऋण के चक्कर मे नहीं पड़ते। यदि उनपर ऋण लद भी जाता है तो उससे वे डरते नहीं। वे अपनी शक्तियो को बढ़ाते हैं, फलतः थोड़े ही दिनो मे ऋण से मुक्त हो जाते हैं।

बेइमान ऋण से नही डरता, वरन इस बात से डरता है कि उसे उस ऋण को भुगवाना पड़ेगा। वह अपने साथी व सरकार दोनों से डरता है। वह सोचता है कि न जाने उसका कोन-सा अशुभ कर्म उसे धोखा दे जाय।

इमानदार इन तमाम बातों से मुक्त रहता है। वह प्रसन्न-चित्त रहता है। अपने साथियो मे सिर ऊँचा करके चलता है। वह किसी को धोखा नही देता, फलतः किसी को उससे डरने की आवश्यकता नही है। उसके विरोध मे कही गई बातें उसका कुछ बिगाड़ नही सकतीं।

यह निर्भयता मनुष्य के जीवन मे उसकी शक्ति का पताका है। प्रत्येक आपत्ति मे वह उसी फहराती हुई पताका को देख-कर उत्साहित होता रहता है, वह कठिनाइयो से वीरो की तरह युद्ध करता है और अन्त मे विजय प्राप्त करता है।

उपयोगिता—चरित्र-निर्माण का ही फल है। चरित्रवान के लक्ष्य सीधे होते हैं। वह अन्दाज से या अंधकार मे काम नहीं करता। उसके सम्पूर्ण उपायो के पीछे उसकी आत्मिक शक्ति लगी रहती है। दृढ़ चरित्र के व्यक्ति के उपाय भी दृढ़ होते हैं।

वह विचारों को तौलता हुआ आगे देखता रहता है, फलतः वह कोई भयंकर त्रुटि नही करता और न ऐसे गर्त मे ही गिरता है जहाँ से उसका निकलना कठिन हो। वह प्रत्येक वस्तु मे शुद्धता देखता है, इसीलिए वह सुदृढ़ स्थान पर अपना पैर जमाता है। वह 'नीति' या 'शीघ्रता' के आधार पर अपना महल नहीं बनाता। शुद्धता से वह सदा आगे ही बढ़ता जाता है। इससे वह अपने अभिप्राय के तह मे पहुँच जाता है।

दृढ़ व्यक्तियो का अभिप्राय भी दृढ़ होता है, फलतः दृढ़ सफलता भी मिलती है। चरित्रवान व्यक्ति बड़ा शक्तिशाली होता है, वह अपनी उस शक्ति के बल पर लोगो मे अपनी प्रभुता की धाक बैठाता है, आदर का पात्र बनता है और तब उसकी प्रशंसा होती है और उसे सफलता मिलती है।

अजेयता—एक ऐसा गुण है जो सदा अपनी रक्षा करता है। परन्तु अजेय वही होता है जिसका चारित्र्य-बल प्रथम श्रेणी का हो, पवित्र हो, पूर्ण हो, डिग न सके। किसी भी परिस्थिति मे जो अपने चारित्र्य-बल से पतित न हो, उसके विरुद्ध संसार की कोई भी शक्ति विजय नहीं पा सकती। पवित्र एवम् पूर्ण चरित्र एक सुदृढ़ कवच है जिसपर किये गये प्रत्येक वार असफल हो जाते है और उस कवच को पहनने वाला अजेयता प्राप्त करता है। बुद्धि, प्रतिभा, योग्यता, व्यवसाय इनमे से एक भी चरित्र-बल की समता नहीं कर सकता। आत्मिक-शक्ति सबसे बड़ी

शक्ति है। सच्ची सफलता प्राप्त करने वाले को अपनी इस शक्ति की उन्नति करनी चाहिये।

सफलता के सात साधनो मे चारित्र्य-बल तीसरा साधन है। संसार मे सबसे अधिक प्रसन्न, तथा भाग्यवान वही व्यक्ति है जो इन साधन को दृढ़ता से अपनाता है।



नियम

नियमित रूप से काम करने मे गड़बड़ी नही होती । प्रकृति का प्रत्येक कार्य नियमित ढंग से होता है । प्रत्येक वस्तु अपने अपने स्थान पर रहती है । यही कारण है कि प्रकृति के स्वरूप मे सहसा कोई विकृति नही आने पाती । प्रकृति के नियम मे गड़बड़ी होने का अर्थ है विनाश । ठीक इसी तरह व्यक्ति-विशेष के नियम मे गड़बड़ी होने के कारण उसका विनाश अवश्यम्भावी हो जाता है ।

जितने भी संगठन कार्य है उनका आधार नियम ही होता है । कोई भी बड़ा व्यवसाय तब तक नही फैल सकता जबतक कि उसे चलाने के लिए अच्छे ढग और नियम काम मे न लाये

जायँ। व्यवसाइयो तथा संगठनकर्ताओं के लिये सुनियमित होना अत्यन्त आवश्यक होता है। जीवन के कई एक अङ्ग ऐसे भी हैं जिसमे अनियमित ढंग से काम करने वाला सफलीभूत हो सकता है, परन्तु जहाँ तक व्यवसाय का सम्बन्ध है बिना ढंग से काम किये सफलता नही मिल सकती। जबतक व्यवसाई एक चतुर व्यवस्थापक रखकर नियम से काम नही करता तबतक उसका व्यापार नही चमक सकता। सभी बड़े व्यवसाइयों के लिये अलग अलग नियम है, जिनके उलङ्घन कर देने से वह व्यवसाय टूटने लगता है। प्रत्येक कार्य या व्यवसाय नियम के ही बल पर चलते है। सब कार्य अपने अपने नियम पर होते रहते है, जहाँ इनके नियम मे व्यतिक्रम आया कि उसमे गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है।

अनियमित ढंग से काम करने वाले अपनी स्फुरणा तथा समय का बहुत बड़ा अंश यो ही खो देते हैं। जितना समय अनियमित रूप से काम करने के कारण नष्ट कर डालते हैं उतना समय किसी छोटे मोटे कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त होता। आवेश, परिहास, तथा उपहास मे जितना समय अनियमित ढंग से कार्य करने के कारण नष्ट होता है, उतने समय मे किसी भी बड़े व्यवसाय को सुसंगठित कर सफलता की ऊँची से ऊँची चोटी तक पहुँचाया जा सकता है। सुव्यवस्था से काम करने वाले अपनी स्फुरणा तथा समय की बचत कर ले जाते हैं। वे कभी किसी वस्तु को भूलते नहीं, फलतः उन्हे किस

वस्तु को ढूँढ़ना नहीं पड़ता। उनकी सभी वस्तुयें अपने अपने जगह पर नियम से रखी रहती हैं। घोर अन्धकार मे भी वह अपनी रखी हुई वस्तु को ढूँढ़ निकालता है। वे सदा नरम बने रहते हैं, फलतः वे कभी आवेश मे नहीं आते। उन्हे क्रोध नहीं आता, वे दूसरो का दोष नहीं निकालते क्योकि वे स्वयम् नियमित रहते है।

नियम के अभ्यन्तर एक ऐसी बुद्धिमत्ता निहित रहती है जो आसानी से काम मे लाते ही आश्चर्यजनक फल दिखा देती है। ढंग और नियम से काम करने वाला व्यक्ति थोड़े ही समय में, बहुत अधिक काम कर ले जाता है, साथ ही थकता भी नहीं। काम पूरा करते समय वह अपने को बँधा हुआ नहीं वरन बन्धन-रहित समझता है। वह उस समय सफलता की ऊँची दीवार पर चढ़ता हुआ-सा दीख पड़ता है जब कि उसका प्रतिपक्षी गड़बड़ी मे पड़ा हुआ दीवार पर इधर उधर रास्ता ढूंढ़ता रहता है। नियमित व्यक्ति के कार्य-कलाप उसे इस योग्य बना देते हैं कि वह शान्ति के साथ शीघ्रगामी बनता हुआ कम समय मे अपने चरम लक्ष्य को पहुँच जाता है।

व्यवसाय के प्रत्येक विभाग में नियम की पूछ होती है, ठीक उसी तरह जिस तरह समाज के प्रत्येक जीवन मे संतों के उपदेशो की आवश्यकता रहती है। 'नियमो' का उलङ्घन करने से आर्थिक धक्का लगने का डर रहता है। आर्थिक-दुनिया

में नियम और ढंग की बहुत बड़ी प्रतिष्ठा है। जो इसकी प्रतिष्ठा करता है, वह समय, स्वभाव तथा धन का दुरुपयोग नहीं करता।

मानव-समाज की प्रत्येक स्थाई सफलता का कारण नियमित जीवन है। यदि समाज के नियम भंग कर दिये जायँ तो वह शीघ्र ही पतनोन्मुख होने लगेगा। आप अपनी ही जाति को ले लीजिये। उसकी प्राचीन, मध्य तथा वर्तमानकालीन अवस्था का परस्पर मिलान कीजिये। उन्नति, साधारण अवस्था तथा अवनति, इन तीनो के तह मे नियम ही छिपा हुआ है। प्राचीन समय मे सबका जीवन नियमित होता था। सन्ध्या, पूजा पाठ, व्यवसाय जप, तप, राग-द्वेष सभी के नियम थे। युद्ध आचार-विचार आदि के पृथक् २ नियम थे। समाज की गाड़ी एक-निर्धारित नियम से अपनी लीक पर चलती थी। फलतः इस जाति के विकास, उन्नति तथा उत्थान की पताका सर्वोच्च शिखर पर फहराया करती थी। सारा विश्व उसी एक पताका को अपना पथ-प्रदर्शक समझता था। देश देश के लोग यहाँ ज्ञानार्जन के लिये आते थे। आज वे सब नियम भङ्ग हो गए हैं।

समाज के अतिरिक्त आज दुनिया के प्रत्येक क्षेत्र मे जो उन्नति दृष्टिगोचर हो रही है, उसका मुख्य कारण यही है कि उन क्षेत्रो मे नियम से काम हो रहा है। साहित्य, विज्ञान, गणित, सभी की उन्नति नियमानुसार कार्य करने से ही हुई है। एक छोटा सा गणित का उदाहरण ले लीजिये। प्रत्येक अध्याय

के लिये पृथक २ नियम है। इन्हीं नियमों से यदि प्रयत्न किया जाय तो उस अध्याय के प्रश्न हल होते है अन्यथा, वे प्रश्न कभी हल ही नही होते। गणित सम्बन्धी नियमों का पालन करते करते मनुष्य ने सूर्य और चद्रमा की गति तक का अनुमान कर लिया है। सूर्य की चाल प्रति-क्षण क्या है, कब ग्रहण लगेगा कब पृथ्वी, चाँद और सूर्य एक सीधी रेखा में आयेंगे, आदि बातो का वर्षों पहिले पता लग जाता है। यह गणित-सम्बन्धी नियमो के पालन का चमत्कार है।

वैज्ञानिक तमाम परिमाणुओं की खोज मे तल्लीन हैं। स्वयः-प्रत्यक्ष तथा अपारदर्शक यन्त्रो द्वारा अनेकों नक्षत्रों का पता लगाया जा रहा है। परन्तु पता लगाने का यह ज्ञान भी कुछ नियमो के ही अनुसार हो रहा है। अनाप सनाप ढंग से उन नक्षत्रो का क्या कभी कुछ पता लग सकता है।

हम धर्म, राजनीति, सम्प्रदाय, समाज, विचार, शिक्षा यात्रा शासन, व्यवस्था, आदि अनेको बातो के नियमो के सम्बन्ध मे प्रतिदिन बात करते रहते है, जिसका तत्व यही निकलता है कि मानव-समाज से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक उन्नतिशील संस्था की नींव सुदृढ़ नियमो पर ही रखी गई है।

नियमो की सुव्यवस्था, वास्तव मे सभी प्रकार की सफलताओं का मूल सिद्धान्त है जो सारे विश्व के मानव-समाज को एक सूत्र मे बांधती है। कौन-सा ऐसा धर्म, समाज, देश, राष्ट्र या प्रान्त है जो सत्य बोलने का नियम नहीं मानता। हाँ इतना

अवश्य है कि प्रत्येक ने अपनी २ परिस्थिति के अनुकूल अलग अलग रास्ता बना लिया है, परन्तु रास्ता बनाते समय एक अमेरिकन के समक्ष वे ही मूल सिद्धान्त रहते हैं जो कि एक तिब्बती के सामने रहते हैं।

कुछेक नियम, जैसे सत्य-भाषण आदि जो ऊपर उल्लेख कर दिये गये हैं—सारे संसार के लिये एक हैं। नीग्रो और अंग्रेज जो पहिले एक दूसरे की सभ्यता, भाषा और आचार-विचार से अनभिज्ञ थे, थोड़े ही काल के अनन्तर आपस में अच्छी तरह बात-चीत करते देखे जाते है। दोनों एक दूसरे को बखूबी समझने लग गये हैं। अवश्य ही कुछ बातें दोनो मे मौजूद रही होंगी तभी तो उनका सम्पर्क बढ़ा होगा। अन्यथा उनके समझने का और दूसरा आधार ही क्या हो सकता है ? आरंभ मे उन्होने संकेत के आधार पर काम लिया होगा। परस्पर के शब्दो को समझने का प्रयास किया होगा। इसी तरह व्यापार, धर्म, विज्ञान, राजनीति सभी क्षेत्रों मे दुनिया के भागो के मनुष्य एक दूसरे से मिलकर एक उभय-पक्षी नियम बना लेते हैं। उन्हीं नियमों के आधार पर एकता का सम्पर्क बढ़ाते हैं।

जीवन की अवधि बहुत थोड़ी है। इसे व्यर्थ मे ही नहीं बिता देना चाहिये। नियमित जीवन से, ज्ञान का विस्तार होता है और उन्नति होती है। इसी तरह जो अपने व्यवसाय को नियम से चलाते हैं, वे उस व्यवसाय की सफलता के लिए एक सुलभ

मार्ग तैयार कर देते हैं। उसी मार्ग पर, उनका उत्तराधिकारी भी सरलतापूर्वक चल सकता है।

बड़े २ व्यवसाय नियम के ही बल पर चलते है, अन्यथा उनका फैला हुआ विशाल ढाँचा एक ही दिन मे लड़खड़ा कर गिर पड़ता सफल व्यवसायी वही है जिसका चलाया हुआ व्यवसाय उसकी अनुपस्थिति मे भी चलता रहे। यह तभी हो सकता है जब कि वह कुछ ऐसे नियम बना दे जिससे उसके व्यवसाय मे गड़बड़ी न होने पाये। जब वह वापस आये, तब उस कारखाने मे चलनेवाली मशीनें अपने उसी स्थान पर बनी रहे—लड़के, बच्चे, स्त्री पुरुष, युवा वा वृद्ध जितने कर्मचारी हो, अपनी अपनी ड्यूटी पर डटे रहे हो। आफिस की प्रत्येक मिसिलें एक दृष्टि मे ही मालूम हो जायं. किसी प्रकार की अव्यवस्था तथा उलझन न पडे।

क्रम और अनुशासन व्यवसायी के लिए अत्यन्त आवश्यक है। क्रम और अनुशासन के साथ साथ मस्तिष्क की शान्त स्थिति भी अनिवार्य है। जिनका अनुशासन ढीला है, जिनके मस्तिष्क मे अशान्ति है, जो लापरवाह है बिना क्रम के काम करने वाले है अथवा जिनके विचार, आदत. व्यवस्था का कोई निश्चित क्रम नही है वे उन्नति वा सफलता के उच्च शिखर पर नही पहुँच सकते। उनके तमाम जीवन मे अनेकों झंझटें, कठिनाइयाँ तथा अस्थिरता उत्पन्न होती रहती है, जिन्हे हम आसानी से नियमित तथा क्रमबद्ध कार्य-प्रणाली द्वारा रोक सकते है।

दुनिया एक रंगमंच है जहाँ केवल सुशिक्षित कलाविद ही विजय पा सकता है, ठीक उसी तरह वह व्यक्ति जो बेढंगे काम करता है, ढंग से काम करन वाले की समानता नहीं कर सकता। आर्थिक, मानसिक अथवा आत्मिक किसी भी प्रकार की उन्नति क्यो न हो, उसी व्यक्ति को प्राप्त हो सकती है जिसका मस्तिष्क नियम-पालन से परिष्कृत हो चुका है। अप-रिष्कृत तथा अनियमित मस्तिष्क का व्यक्ति जीवन की दौड़ मे पुरस्कृत नही हो सकता। आप कार्यालय मे काम करने पहुँचे, परन्तु कलम का पता नही, दावात की स्याही सूखी हुई है, दाराज की कुंजी घर पर छूट गई, फिर आप क्या काम करेंगे? उस समय दराज की चाभी की तरह आपके विचारों की भी चाभी स्थानान्तरित-सी मालूम पड़ने लगती है। उस व्यापारी को—जिसका व्यापार धीमा पड़ रहा है, जिसपर रुपया चढ़ता जा रहा है—सावधान हो जाना चाहिये। उसे अपनी कार्य-शैली को बदल या उसका संशोधन कर उसका दोष निकाल देना चाहिये। उसे उन तमाम साधनो को अपनाना चाहिये, जिससे समय तथा श्रम के व्यय मे कमी हो सके, तथा व्यवसाय को फैलाने, चलाने एवम् बढ़ाने मे सहायता मिले।

व्यवस्था, ढंग, नियम ऐसी वस्तुयें है जिससे संस्था, व्यव-साय, चरित्र, राष्ट्र, तथा साम्राज्य का निर्माण होता है। कमरे से कमरा, भाग से भाग, विचार से विचार, विधान से विधान, उप-निवेश से उपनिवेश जोड़ने से ही बड़े-बड़े साम्राज्यों की सृष्टि

हुई है। जो मनुष्य लगातार अपने उपायो में सुधार कर रहा है, शक्ति-संचय मे उन्नति करता जा रहा है, वह अन्य व्यापारियो को उन्नतिशील बनने के लिए उत्साहित करता है। वह निर्माण-कर्ता जो मंदिर, चरित्र, व्यवसाय अथवा धार्मिक या किसी संस्था का—निर्माण करता है, उसका आदर्श लोगो को स्वतः उत्साहित करता है। ऐसे लोग, पृथ्वी के भार को हल्का करने वाले कहे जाते हैं, ऐसे ही लोगो से मानव-समाज का उपकार होता है। ढंग से निर्माण करने वाला, समाज का रक्षक तथा स्रष्टा है; परन्तु जो लोग बेढंगा काम करने वाले हैं वे नाशक होते है। ऐसा व्यक्ति कितने दिनो मे उत्थान कर सकेगा, ठीक तरह से बताया नहीं जा सकता।

नियम के अन्तर्गत चार वस्तुयें हैं।

तैयार रहना,	सदुपयोगिता
ठीक ठीक काम करना,	ठोस काम करना

तैयार रहने का अर्थ है जीवित रहना। परिस्थिति चाहे अच्छी हो या बुरी उसका सामना करने के लिए वह पहले से ही तैयार बैठे रहता है—फिर वो किसी विपरीत परिस्थिति से भी वह कभी हानि नहीं उठा सकता। परन्तु तैयार रहने की भावना उसी समय आप मे आ सकती है जब कि, आप नियम से काम करे। युद्ध-क्षेत्र मे काम करने वाला प्रधान सैनिक अपनी उपस्थिति के प्रत्येक क्षण मे जीवित रहता है—तैयार रहता है। जभी शत्रु उत्तर करता

है, तभी वह उसे प्रस्तुत पाता है। इसी तरह युद्धक्षेत्र-रूपी व्यवसाय-क्षेत्र मे भी मनुष्य को अहर्निश तैयार रहना चाहिये, ताकि वह किसी भी समय प्रतिकूल परिस्थिति से मोरचा ले सके। दीर्घ-सूत्री होना एक दोप है, इससे उत्थान से कोई सम्बन्ध नहीं। क्योंकि उत्थान उन्ही का होता है जो उसके मार्ग मे सर्वदा तैयार रहते है। अपने को सदा तैयार रखने वाले, तैयार हृदय वाले, तैयार मस्तिष्क वाले जो कुछ करते है समझकर करते हैं और चतुराई से करते हैं। वे उन्नति की चिंता मे घुलते नहीं, कारण उनके पास इसके लिये समय नहीं है। उन्नति का उनके पास आना अनिवार्य है, वे चाहे उन्नति-शील बनने की इच्छा प्रकट करें या न करें। सफलता उनके पीछे दौड़ती है।

हर प्रकार के व्यवसाय-सम्बन्धी कार्यों मे ठीक ठीक काम करने का बड़ा महत्व है। परन्तु अनियमित ढंग से काम करने वाले कभी ठीक हो ही नहीं सकते। अनियमित ढंग से काम करने वाले पग पग पर गलती करते है। ठीक काम न करना एक साधारण दोष है। कारण ठीक ठीक काम वही कर सकता है जिसका अपने पर अनुशासन हो, जो उच्च श्रेणी का चरित्रवान हो। यदि गलत काम करने वाला थोडे ही दिनो मे अपने को ठीक रास्ते पर नही लाता—यह समझ कर कि जो कुछ वह कर रहा है ठीक ही कर रहा है—तो उसका मालिक उसे कभी भी क्षमा नहीं करेगा। इतना ही नहीं वरन, वह उसे निम्न पद पर कर देगा। यह बात धार्मिक या व्यवसायिक

दोनो क्षेत्रो के लिए लागू है। गलत किया हुआ काम कभी छिपता नही।

एक महाशय थे। ये एक अखबार की दुकान मे क्लर्क थे। रोज रोज की बिक्री और उससे होने वाली आय का उन्हे हिसाव रखना पड़ता था। दो सौ अखवार एक आना के हिसाव विकता तो उनके पास वारह रुपया आठ आना होते। पैसे तो उनके पास साढ़े वारह रुपये के होते परन्तु बचे हुए अखवार की संख्या मे कभी कभी जोड़ने मे गलती हो जाती। उस जोड़ से मिलाने पर जब पास का पैसा बढ़ा हुआ मालूम होता तो उस अधिक पैसे को ईश्वर का दिया हुआ समझ कर ये अपना लिया करते थे। बाकी मालिक को जमा कर देते थे। महीने के अन्त मे जब मालिक ने हिसाव किया तो मालूम हुआ कि अखबारो की बिक्री अधिक हुई है, पर पैसे कम जमा किये गए है। बिचारे क्लर्क महोदय को 'ईश्वर का दिया हुआ' सारा पैसा लौटाना पड़ा। उसके लिए उन्हे जलील भी होना पड़ा। यदि वे ठीक ठीक जोड लगा लेते तो, कदाचित उन्हे इतना जलील न होना पड़ता।

कुछ लोग ठीक ठीक कर दिखाते है, परन्तु कहते समय ठीक ठीक नहीं कहते। कारण कहने को तो झोंक मे ठीक बेठीक सभी कुछ कह डालते है, परन्तु करते समय उन्हे अपनी गल-तियो का खयाल हो आता है।

जो अपना कुछ समय अपनी तथा अपने मालिक की प्रतिदिन

की त्रुटियो के सुधारने मे लगाता है, वह वहुत शीघ्र मालिक की प्रसन्नता का भाजन वन जाता है ।

संसार मे कदाचित ही ऐसा कोई व्यक्ति होगा जिसने कभी गलती न की हो, परन्तु योग्य व्यक्ति वही है जो अपनी गलतियो को देखते ही देखते उसमे सुधार कर लेता है। यही नहीं वरन् जब कोई उसे उन गलतियो को दिखा देता है तो वह अप्रसन्न होने के बदले प्रसन्न हो उठता है ।

नासिरुद्दीन बादशाह के सम्बन्ध मे यह कहा जाता है कि वह कुरान लिखकर आजीविका कमाता था। उसके लेख मे जब कोई गलती दिखा देता तो वह उस गलती को तुरन्त सुधार दिया करता था। बे-ठीक काम करना तभी दोष माना जाता है जब कि करनेवाला जान बूझकर गलत कर दिया करता है अथवा बताने पर भी न चेते और उलटे अप्रसन्न हो उठे ।

उन्नतिशील व्यक्ति अपनी तथा औरो की गलतियो से शिक्षा ग्रहण करता है वह अभ्यास से अच्छे उपदेशो को सुनने और उसके अनुसार काम करने को तैयार रहता है, अपने उपायो को ठीक से ठीक रूप मे काम मे लाने की सोचता रहता है। फलतः वह अपने काम को पूर्णरूप से पूरा करने में सफलीभूत हो जाता है ।

सद्-उपयोगिता का अर्थ है अवसर का उचित उपयोग । कोई काम उपयोगी तभी होता है जव करने वाला सीधे मार्ग का अवलम्बन करता है । यदि किसी किसान को अपनी फसल से

अच्छी उपज लेना है तो, अच्छा बीज, अच्छे खेत मे डालने ही से उसे अच्छी उपज नही मिल सकती, इसके लिए उसे ठीक मौसिम मे बीज बोना होगा। इसी तरह यदि आप किसी काम का अच्छा फल पाना चाहते हैं तो उसी किसान की तरह संयोग देखकर उचित अवसर पर ही काम आरम्भ करें। संयोग और अनुकूल समय को व्यतीत कर देने वाला किसान पूरे वर्ष भर पछताया करता है।

सदुपयोगिता का सम्बन्ध क्रियात्मक कार्य के लक्ष्य से रहता है। उस अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अच्छे अच्छे उपायो को काम मे लाना चाहिये। अच्छे और सीधे मार्गों से उस लक्ष्य तक पहुँचना चाहिये। इधर उधर अनभिज्ञ मार्गों का अवलम्बन करना, यह समझ कर कि हम ठीक स्थान पर पहुँच जायँगे ठीक नही। जो व्यक्ति केवल सिद्धान्तवादी है, क्रियावादी नही हैं, वे सिद्धान्तो के ही चक्कर मे रह जाते हैं, उनकी योजना कभी कार्य-रूप मे परिणत नही हो पाती। सिद्धान्तवादी आशा के पीछे ही चौपट हो जाते है। आपकी शक्ति उस काम से मालूम होती है जिसे आप करते है न कि उस काम से जिसे आप सोचते हैं। ऐसे ही क्रियाशील संसार मे कुछ अच्छा कार्य भी कर जाते हैं। जो कार्य आप कार्यरूप मे परिणत न कर सकें उसे सोचें भी नही। सोचने से मानसिक-शक्ति का ह्रास होता है। उसकी बात ही छोड़ दीजिये। एक सज्जन थे जिन्हें हम लोग डाक्टर हरफ़न मौला कहा करते थे। उन्हे संसार की प्रत्येक वस्तु मे 'लाखो'

का ही स्वरूप दीख पड़ता था। एक दिन तरकारी वजार में पड़े हुए मूली के पत्तों को देखकर उन्होने कहा कि इन पत्तो से लाखों पैदा किया जा सकता है। पूछने पर आपने वताया कि इससे 'क्षार' (दवा मे डालने का नीमक) निकाला जा सकता है। कुछ लोगो की जीभ 'लखो' का नाम सुनकर तर हो गई। पचीस रुपया खर्च कर, तीन चार लोहे की कड़ाहियां, मिट्टी के नाद और कोयले आदि जुटाये गये और 'लाख' की आशा मे मत्त लोग 'क्षार' बनाने बैठ गये। पहिले ही घान मे दो सेर के करीव नीमक तैयार हुआ। परन्तु उसे वेचने का कोई भी प्रवन्ध नही सोचा गया था। डाक्टर हरफनमौला की ही यह योजना थी। विचारे को स्वयम् विभिन्न रसशालाओ मे जाना पड़ा। वड़ी कठिनता से उस क्षार की बिक्री हुई। उसमे भी काफी पैसा उधार रह गया। केवल एक ही माह में क्षार-शाला भी वन्द हो गई।

ऐसी योजनाओं मे हम अपनी—आर्थिक, मानसिक, वौद्धिक, तथा अन्य प्रकार की शक्तियाँ खो वैठते हैं। जिस सिद्धान्त का कोई आधार न हो, जिस सिद्धान्त को हम क्रियात्मक रूप न दे सकें, ऐसे सिद्धान्तो से भला क्या उपकार हो सकता है ?

जव आप अपना मस्तिष्क कोरे सिद्धान्त से हटाकर—चाहे वह धार्मिक हो या आर्थिक—ऐसे कार्यों की ओर लगा देते है जिनसे कुछ फल मिल सकता है तव आपकी चतुराई, शक्ति, ज्ञान तथा उन्नति में वृद्धि होती है। आप समाज के लिये

कितने उपयोगी हैं, इस बात का तब अन्दाज लगाया जाता है।

वढ़ई कुर्सी बनाता है, लुहार कल पुर्जे तैयार करता है, लेखक पुस्तकें लिखता है और बुद्धिमान मनुष्य चरित्र का निर्माण करता है। निरी योजनावाला तथा बातूनी व्यक्ति समाज के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। समाज के लिए, श्रमिक, निर्माता तथा विधायक ही उपयोगी है। वे समाज के प्राण हैं, वसुन्धरा के आभूषण है और मानव-समाज के सच्चे उद्धारक हैं।

ख्याली पुलाव पकाने वालो को कुछ न कुछ करते रहना चाहिये। केवल कहने से ही काम न चलेगा। जो आज 'कुछ' आरम्भ कर देगा, वही कल बहुत कुछ और परसो 'सब कुछ' कर डालेगा।

ठोस और गम्भीर रूप से काम करने वाले की गति-विधि ही कुछ ऐसी होती है जिससे उसका उत्थान अवश्यम्भावी हो जाता है। ठोस काम करने वाला कठिन से कठिन कामो को भी थोड़े ही समय मे पूरा कर डालता है। यह प्रभुत्वमय गुण है इससे संगठन करने एवम् शासन करने का अनुभव प्राप्त होता है। इस शक्ति का विकास नियमपूर्वक प्रत्येक छोटी मोटी बातो के अध्ययन करने से ही होता है। जो सफल व्यापारी हैं, वे अपने कारखाने की छोटी छोटी बातो तक को याद रखते हैं, फलतः वे एक ढंग से उसे चलाते जाते है! अन्वेषक को अपनी यात्रा के प्रत्येक छोटी छोटी बातो का स्मरण रहता है. इसी से वह छिपे रहस्यो का उद्घाटन कर लेता है। सफल उपन्यास लेखक

यदि बारीक से बारीक घटनाचक्रों को ध्यान मे नहीं रखता तो उसका उपन्यास कभी भी सफल नही होता। हरएक व्यक्ति बुद्धिमान नही हो सकता और न आवश्यकता ही इस बात की है कि प्रत्येक व्यक्ति बुद्धिमान ही हो। संसार-प्रसिद्ध अनुसन्धान-कर्त्ता ऐडीसन का कहना है कि किसी काम की सफलता-प्राप्ति मे यदि बुद्धि से एक आना सहायता मिलती है तो परिश्रम पन्द्रह आना सहायता देता है। जो बुद्धिमान नही है वह भी अपने मस्तिष्क का विकास कर सकता है, वह भी सफलता प्राप्त कर सकता है। इसके लिये उन्हे तैयार रहने, सदुपयोगी बनने, काम को ठीक ठीक करने तथा काम को ठोस रीति से करने की ओर अपना ध्यान लगाना होगा।

ये चार बातें सफलता के आवश्यकीय साधन (नियमित ढंग से कार्य करना) को बनाने मे सहायक होती है। वह मनुष्य जो अपनी स्फुरणा का पूर्ण विकास कर लेता है, जो मितव्ययी है, चरित्रवान है तथा नियमित ढग से काम करता रहता है, वही अपने जीवन मे स्थाई सफलता प्राप्त करता है। उस व्यक्ति का असफल होना—जो सावधानी से धन, समय, बुद्धि और शक्ति का समझ बूझकर उपयोग करता है, अपने चारित्र्य-बल को दृढ़ रखता है और नियम से काम करता है—असम्भव है।

ऐसे व्यक्ति का प्रयत्न भी ठीक ठीक सफल होगा। वह पूर्ण शक्ति को प्राप्त करेगा, उसका मान होगा, वही सफलता का

अधिकारी होगा। वह शक्ति-हीनो के मध्य मे अपनी उपस्थिति से शक्ति का संचार करेगा, उन्हे नवजीवन प्रदान करेगा। वह संसार का यश प्राप्त करेगा। वह भिक्षुक नहीं, दाता होगा। वह निर्बल नही सबल होगा, वह शासित नही शासक होगा। वह रक्षित नही रक्षक होगा। उसका चारित्र्य-बल उसे उन्नति के शिखर पर आसीन कर देगा। वह मानव-समाज की दृष्टि मे बहुत ऊँचे पद का अधिकारी समझा जायगा। उसकी सफलता एवम् उन्नति अवश्य होगी, वह जीवन-युद्ध मे वज्र की भाँति अजेय होगा।

सफलता प्राप्ति के मंदिर का चौथा स्तम्भ पूर्ण हुआ। इस स्तम्भ का लक्ष्य है उचित रूप से नियम का पालन करना।

विश्वास

मानव-समाज परस्पर विश्वास के ही सूत्र में बँधा हुआ है। यदि दुनिया मे अविश्वास का बोलबाला हो जाय तो, मानव-समाज की एक-सूत्रता नष्ट हो जायगी, उसका विनाश अति निकट आ जायगा। किसी गाँव, मण्डल, भाग, प्रान्त, देश, राष्ट्र, साम्राज्य अथवा व्यापक रूप में सम्पूर्ण संसार का विनाश निकट आने के पहिले, मानव-समाज का महान शत्रु "अविश्वास" सद्भावनारूपी संजीवनी का स्थान ले लेता है। यदि यह संजीवनी मौजूद रहे तो मानव-समाज की अधोगति कभी न हो; परन्तु अविश्वासरूपी संक्रामक रोग के आक्रमन से लोग आपस में लड़ मरकर स्वयम् विनाश को प्राप्त हो जाते हैं।

यदि हम एक दूसरे पर विश्वास करना छोड़ दें तो कल ही सारा व्यवसाय वन्द हो जायगा। शेक्सपियर ने अपने एक नाटक मे टीमान नाम के एक पात्र की रचना की है। वह अपने सभी साथियो के अविश्वास का पात्र वन जाता है। सभी उसका साथ छोड़ देते है, फलतः उसे अन्त मे आत्महत्या कर लेनी पड़ती है। इमर्सन का कहना है कि यदि व्यवसायी-संसार से परस्पर विश्वास की भावना उठ जाय तो एक भी व्यवसाय नहीं चल सकता। इससे यह प्रमाणित होता है कि संसार का मानव-समाज एक ही रस्सी से बँधा है। अदूरदर्शी व्यक्तियो की धारणा है कि व्यापार की नींव धोखेवाजी और छल प्रपंच पर रखी हुई है, परन्तु उनकी यह धारणा नितान्त भ्रममूलक है। इसकी नींव पवित्र 'विश्वास' पर रखी गयी है। यह विश्वास ही सबके विश्वास का कारण है, और सभी इसी विश्वास के अनुसार कार्य करना अपना अपना कर्त्तव्य समझते है। जब तक सामान ग्राहक के हाथ मे नहीं रख दिया जाता तब तक दाम नहीं मांगा जाता। यह प्रथा अनादि काल से चली आ रही है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि लोग ऋण चुका दिया करते थे न कि उसे हड़प कर जाते थे।

मानव-समाज की स्थिरता का आधार सत्य है। यही इस समाज को स्थिर रखे हुए है। इस सत्य का मूल-तत्व विश्वास-पात्रता है। संसार के बडे से बड़े नेता विश्वासपात्र व्यक्ति ही होते हैं। उनकी छोटी सी छोटी बात का भी लाखो और

करोड़ों की संख्या मे जनता विश्वास करती है। अपने ही देश का उदाहरण लीजिये, गांधी की एक हुंकार पर लाखों नर नारी जेल चले गए। करोड़ों ने राष्ट्रीय जलूसों की शोभा बढ़ाई, सहस्रो ने अपने सिर तुड़वाये और सैकड़ो सदा के लिये इस संसार से विदा हो गए! इन सब का कारण क्या था? गांधी मे जनता का विश्वास और गांधी का जनता में विश्वास! केवल भारत ही नहीं टर्की, जर्मनी, रूस, तथा अन्य देशो मे विश्वासी नेताओं को ही प्रतिष्ठा है। जैसे पाण्डुरोगी को सारा संसार पीला दिखाई देता है, उसी प्रकार अविश्वासी को सारी दुनिया विश्वासरहित मालूम पड़ती है। जिन्हे दूसरो मे अथवा समाज मे कोई बुराई दीखती हो, उन्हे पहिले अपने आप को सुधराना चाहिये। वे अच्छे को बुरा कहते है। वे बुरी बातो के इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि उन्हे अच्छी बात दीखती ही नहीं। "समाज की शृङ्खला नीचे से ऊपर तक बिगड़ गई है" ऐसी बात प्रायः लोग कहते रहते हैं, यही नहीं वरन् वे यह भी चाहते हैं कि उनकी बात का लोग समर्थन भी किया करें। ऐसे लोगो को यह मालूम होना चाहिये कि समाज के भीतर न कभी कोई बुराई रही है और न रहेगी। व्यक्ति विशेष ही बुरे आचरणवाले होते है और वे ही समाज की बुराई का कारण बनते है।

समाज का संगठन तो इतना ठोस है कि, जो लोग दूषित एवम् स्वार्थी मनोवृत्ति लेकर अपने ध्येय की पूर्ति मे लगे रहते हैं,

वे स्वयम् नष्ट हो जाते हैं, उनका प्रभाव नष्ट हो जाता है, वे समाज की दृष्टि में घृणा के पात्र बन जाते है। उनकी कलई खुल जाती है और वे अप्रतिष्ठित समझे जाते हैं।

मंच पर एक कुशल अभिनेता, चरित्र-विशेष की ठीक नकल करते हुए सराहनीय समझा जाता है, परन्तु संसार के रंगमंच पर, जो मनुष्य नकली अभिनय करता है, अपना वह रूप दिखाता है जो वास्तव मे उसका नहीं है, तो वह भर्त्सना का पात्र बन जाता है, लोग उसका अपमान करते है। नकल करते समय यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि उसमे न अपनापन है, न चारित्र्य बल और न प्रभाव।

कहा भी है 'विश्वासं फलदायक'। शुद्ध और ठोस विश्वास-पात्रता एक महान गुण है, इसकी तुलना मे बड़े से बड़े गुण भी नहीं ठहर सकते। उन्हीं का प्रभाव संसार मे अधिक से अधिक दिन तक रहता है जिनमे विश्वास-पात्रता की शक्ति होती है। चारित्र्य-बल एवम् विश्वसनीयता का एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध है। जहाँ विश्वास का अभाव होगा वहीं चारित्र्य-बल भी अपूर्ण होगा। कारण अविश्वसनीयता चारित्र्य-बल को टिकने नहीं देती। चारित्र्य-बल ही नहीं वरन् वह अन्य सद्गुणों को भी मार भगाती है। अविश्वसनीयता का छोटे से छोटा रूप भी चारित्र्य-बल की तमाम अच्छाइयों को नष्ट कर देता है। धूर्तता एक ऐसी जहरीली पदार्थ है जिससे चारित्र्य-बल एवम् प्रभाव दूषित हो जाता है। छोटी से छोटी क्रिया में भी यदि

किसी ने धूर्तता से काम लिया तो उसका बड़े से बड़ा प्रभाव भी नष्ट हो जाता है; और इसी से स्पष्ट हो जाता है कि उक्त व्यक्ति की मानसिक शक्ति अपूर्ण है।

ऐसा भी संभव है कि, अविश्वससियो की प्रशंसा मे लोग कुछ समय तक चिकनी चुपड़ी बातें कहते रहे, परन्तु ऐसी प्रशंसा स्थाई नहीं होती। धीरे धीरे उसका प्रभाव नष्ट होने लगता है। उस समय की प्रशसा का स्वरूप शीघ्र ही अनन्त मे विलीन हो जाता है।

"मै उसकी बातों से बहुत प्रसन्न हूँ" एक स्त्री ने एक मिलने वाले के प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए कहा।

'परन्तु मै उससे विवाह न करूँगी।'

उसकी सखी ने पूछा—क्यो नही? उसने उत्तर दिया—उसकी आँखो मे अविश्वसनीयता झलक रही है।

अविश्वसनीयता ही सन्देह का कारण है। नकली रुपया ज्यो ही बनाया जाता है त्यो ही वह 'नकली' प्रमाणित हो जाता है। चाँदी के असली रुपयों ने शताब्दियो से अपने 'स्वर' मे सिक्का जमा रखा है। लोग उसके स्वर को पहचान गए हैं। उसकी आवाज सुनते ही उसके प्रति उत्पन्न हुआ सन्देह दूर हो जाता है।

यही बात मनुष्यों के भी सम्बन्ध मे लागू होती है। उनके शब्द और कर्म दोनो तुरन्त अपना प्रभाव उत्पन्न कर देते हैं।

उनके शब्द की पहिली झनकार से ही श्रोतागण मन्त्रविमुग्ध हो जाते हैं।

शिकागो के समस्त-विश्व-धर्म सम्मेलन मे स्वामी विवेकानन्द सनातनधर्म के प्रतिनिधि होकर उपस्थित हुए थे, परन्तु पहिले तो भाषण करने के मंच पर खड़े होते ही उन्हे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, फिर दूसरे जब वे किसीतरह मंच पर खड़े हुए तो लोगों मे उनके प्रति घोर निराशा उत्पन्न हो गई। लोगो ने सोचा कि यह साधारण गेरुआ वस्त्रधारी नवयुवक भाषण देने की क्या क्षमता रखता होगा? परन्तु स्वामी जी के प्रथम शब्द "भाइयो और बहिनो!" के ही टङ्कार से जन-समुदाय मे निस्तब्धता छा गई।

स्वामी जी के प्रति लोगो का जो सन्देह था वह दूर हो गया। शब्दो की प्रतिध्वनि पड़ती है कान पर, परन्तु उसका प्रभाव हृदय पर पड़ता है। धोखेबाजो से धोखा नहीं मिलता। धोखा मिलता है अपने से। हम स्वयम् अपने को धोखा देते हैं। अपने काम की स्वयम् प्रशंसा करने लग जाते है। परन्तु हम जो कुछ भी कार्य करते हैं—उसके सत्य, असत्य का निर्णय हमारे हृदय रूपी न्यायालय मे होता रहता है। वहाँ हमारी ज्ञानेन्द्रियां एकत्रित होकर अपना निष्पक्ष निर्णय देती है। यदि इन्द्रियां धोखा दे जाती है, या देने लगती है तो तुरन्त हृदय को सब मालूम हो जाता है।

ठीक यही गति समाज की है। यदि कोई व्यक्ति किसी को

धोखा देना चाहता है या दे देता है तो वह बात समाज से छिपी नही रहती। समाज उस बात को जान लेता है। अब उस अपराधी के प्रति समाज मे निर्णय होता है, उस निर्णय से उक्त समाज की परख की जाती है। सभ्य समाज का निर्णय 'सभ्य' होता है। जिस समाज मे जिस अङ्ग के साथ पक्षपात होता है उस समाज मे उस अङ्ग के प्रति निर्णय देते हुए, समाज पक्षपात भी करता है। ऐसे पक्षपात, निर्णय के लगातार होते रहने से समाज-विशेष पापियों से परिपूर्ण हो जाता है, फलतः सारा समाज दूषित हो जाता है। उस निर्णय की छाप, उस समाज के व्यक्तियों द्वारा उत्पन्न किये गए साहित्य, कला, विज्ञान, अनुसंधान, सम्प्रदाय—यही नही वरन जीवन के प्रत्येक अङ्ग पर पड़ जाता है। उनमे गुण, दोष, योग्य, अयोग्य, सत्य, असत्य आदि अपना-अपना रूप अलग अलग दर्शाते रहते हैं। लोग अपनी रुचि के अनुसार एक को अच्छा समझकर अपना लेते है और दूसरे को नष्ट होने के लिए छोड़ देते हैं।

महापुरुषो के कार्य, वचन तथा क्रियायें समाज की अनुभूति सम्पदा है, और समाज उस सम्पदा के प्रति उदासीनता की भावना नही रखता। वे बार बार कहे और सुने जाते हैं। प्रत्येक युग के लेखक उन्हे अक्षरबद्ध कर समाज के सामने उपस्थित किया करते हैं।

एक सहस्र लेखको में केवल एक या दो, मौलिक विषयो के

लेखक होते हैं। परन्तु समाज उस एक हजार मे से उस एक को आसानी से छांट लेता है। बाकी लेखको की स्मृति धीरे धीरे धुधॅली हो अंधकार मे विलीन हो जाती है। वक्ता चार चार घंटे तक भाषण देता रहता है, जिसके सिलसिले मे वह सहस्रो वाक्यो का प्रयोग कर डालता है, परन्तु श्रोतागण उन सहस्रो वाक्यो मे से एक या दो वाक्य चुन कर निकाल लेते है, बाकी छोड़ देते है। "स्वदेशी वस्त्र पहनना चाहिये" इस एक वाक्य को वक्ता तीन चार घटे तक गला फाड़ फाड़कर समझाता रहता है, परन्तु श्रोतागण अन्त मे वही एक वाक्य निष्कर्षरूप मे लेकर घर जाते हैं। उसी एक वाक्य को 'लक्ष्य' रूप मे स्वीकार कर उसको अपनाते है। स्व० दादा भाई नौरोजी भारत के पहिले व्यक्ति थे जिन्होने पहले पहल 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था। यह उनकी मौलिक उक्ति थी। केवल उसी एक "स्वराज्य" शब्द के साथ स्व० दादा भाई का नाम अमर हो गया। अब सहस्रो लोग उस शब्द का प्रयोग कर रहे हैं, परन्तु जो मौलिकता उनके प्रयोग मे थी वह औरो के प्रयोग मे नहीं आ सकती।

संसार मे ऐसी भी जातियो हैं जिन्होने अपने महापुरुषो की हत्या की है, परन्तु उनकी हत्या करने पर भी, उन्होने उनकी पवित्र वाणियां, सत्कार्यों एवम् क्रियाओ की रक्षा की है। ईसामसीह को शूली दी गई। मुहम्मद साहब को मक्का से मदीना भागना पड़ा। सती सीता को आग मे जल कर अपने सतीत्व की कड़ी

परीक्षा देनी पड़ी, यही नहीं वरन् उन्हे अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे बनवास का भी दुःख झेलना पड़ा। स्वामी दयानन्द को विष दिया गया। यह सब कुछ हुआ, परन्तु जिस ध्येय को लेकर वे मानव समाज मे अवतीर्ण हुए थे उस ध्येय की पूर्ति हुई और उनका नाम, यश एवम् कीर्ति आजतक अमर है। जिस समाज के वे रत्न है, वह समाज उनपर गर्व करता है। उनके आदर्शो पर चलने मे आज भी समाज अपना गौरव समझता है। यद्यपि समाज ने इन महात्माओ को उनके जीवनकाल मे नाना प्रकार की यातनायें दीं परन्तु उनकी सत्यवादिता मे उन्हें पक्का विश्वास था। वे उनके कथन मे विश्वास रखते थे। वे यह जानते थे कि उनका संदेश कितना जोरदार है।

जिस तरह नकली रुपया जाली समझ कर फेंक दिया जाता है और असली रुपया हाथो हाथ चलता रहता है, ठीक उसी प्रकार जाली शब्द अनावश्यक समझे जाते है और असली शब्द सबकी जिह्वा पर रहते हैं।

नकली वस्तु, चाहे वह जड़ पदार्थ हो या जीवधारी—कोई मूल्य नहीं रखता। असली वस्तुओं की नकल मे जो नई वस्तु बनाई जाती है, उसकी बाजार मे कोई प्रतिष्ठा नहीं होती। नकली वस्तुयें सस्ती होती है। असली वस्तु का दाम अधिक होता है। गम्भीर हृदय का व्यक्ति साधारण मनुष्यो से बड़ा समझा जाता है, यही ध्रुव सत्य है। नकल होते ही उसमे से असल गुण नष्ट हो जाता है—व्यक्तित्व का विनाश हो जाता है। नकल-नकल

हो है, वह असल का रूप धारण नही कर सकता। 'सत्य' से विजय की प्राप्ति होती है। कारण सत्य, स्थाई, स्थिर तथा वास्तविक होता है।

यह वहुव आवश्यक है कि हम वास्तविक वनें। हम जो कुछ हैं, उसी रूप मे प्रकट हो, हमे सदगुण भी उधार मे न लेना चाहिये, व्यवहार मे अच्छापन को भी न ग्रहण करना चाहिए। अपने वुद्धि पर सुनहला परदा न डालना चाहिये। नक्काल समझता है कि वह अपनी मक्कारी से दुनिया को चकमा दे देगा, परन्तु वह दुनिया मे केवल एक व्यक्ति को अपने चकमे मे ला सकता है और वह व्यक्ति, वह स्वयम् है। कहावत है कि कौवा 'वहुत चालाक होता है, परन्तु वह गलीज खाता है' उसी प्रकार वहानेवाजी को अपनाने वाला व्यक्ति अपनी असलियत से रहित हो जाता है। वह स्वयम् एक 'वहाना' वन जाता है, वहानेवाज व्यक्ति भी कभी सफलता पा सकता है, ऐसा सोचना हास्यास्पद है। क्या कही परछाईं भी वोल सकती है ?

जो यह सोचता है कि वह वहानेवाजी और ऊपरी दिखाऊ वातो के आधार पर, सफलता का महल खड़ा कर लेगा, तो उसे पहिले थोड़ी देर तक विचार कर लेना चाहिये कि वह परछाईं के पीछे वास्तविक व्यक्ति समझ कर दौड़ने की चेष्टा करता है। सफलता के महल का आधार 'विश्वास' ही हो सकता है। अविश्वासियो के लिये, न तो कोई ठोस आधार है और न महल वनाने के लिए सामान। अविश्वसनीय

व्यक्तियों का कोई साथ नहीं देता। गरीबी, लज्जा, झंझट, भय, सन्देह; रुदन, क्रन्दन, और विलाप आदि उसका पीछा कर उसे नष्ट कर देते हैं। जिसमे दुनिया का अविश्वास हो गया, उसके लिए फिर यह दुनिया 'नर्क' रूप मे हो जाती है। इस नर्क से बढ़कर दुःखदाई दूसरा नरक नहीं है।

विश्वासपात्र व्यक्ति के चार गुण होते हैं।

सादगी,	प्रवेश
आकर्षण,	बल

सादगी प्राकृतिक गुण है। सादगी को वाहरी सजावट वा कलई की आवश्यकता नहीं रहती। प्रकृति के भण्डार की समस्त वस्तुयें क्यो सुन्दर दीखती हैं? हम उन्हे उसी रूप मे देखते है जिस रूप मे वे हैं, या जिस रूप मे उन्हे होना चाहिये। कारण उन्हे दूसरा रूप धारण करना अच्छा नहीं लगता। वे वाह्य आवरण से घृणा करती हैं। कोई भी पुष्प, जिसकी सुन्दरता पर दर्शक मुग्ध हो जाता है, यदि वह अपने नकली रूप में प्रकट हो तो दर्शक-मात्र उससे घृणा करने लगेगा। प्रकृति को देखने के बहाने हम असलियत को देखते है। उसकी सुन्दरता तथा पूर्णता हमें मुग्ध कर लेती है। हरएक वस्तु मे अपनी अनोखी परिपक्वता होती है और वह अपनी सुन्दरता को न जानते हुए भी फैलाती रहती है।

आज कल के पहुँचे हुए महापुरुष 'प्रकृति को वापस जावो' (गो बैक टू नेचर) का उपदेश दे रहे है। इसका अर्थ यह है कि

वे चाहते है कि मनुष्य कृत्रिम आवरणो का बहिष्कार कर प्राकृतिक रूप धारण करे। देहात मे एक झोपड़ी और जोतने बोने के लिए थोड़ा सा खेत—यही उस प्राकृति का एक स्वरूप है। परन्तु इस रूप को अपनाकर हमे उस समय तक कोई लाभ नही होगा, जब तक कि हम अपने दुर्गुणो को साथ रखते है। कारण, ये दुर्गुण आप कहीं भी रहेगे, आपका नाश करेंगे।

कोलाहलमय समाज के दूषित वातावरण से जो शान्ति पाना चाहते है, उन व्यक्तियो को, दिहात के एकान्तमय वातावरण मे बसना उचित है परन्तु वहाँ पहुँचकर भी यदि उन्होने सादगी न अपनाई और वही तडक भड़क कायम रखा जो उन्होने नगर मे रखा था तो उस दिहात का भी वातावरण अशुद्ध हो जायगा।

मानव समाज पहिले पशु-श्रेणी के अन्तर्गत समझा जाता था। कुछ, बौद्धिक शक्ति के विचार से ही नहीं—वरन् सादगी के विचार से भी। पर अब वह उस श्रेणी से पूर्णरूप से अलग होकर देवत्व की ओर बढ़ रहा है। प्रतिभावान व्यक्ति सादगी के साक्षात स्वरूप होते है। वे मानने से नहीं वरन वे स्वयम् वैसा होते है। छोटे मस्तिष्क वाले व्यक्ति शैली और प्रभाव का अध्ययन करते है। वे दुनिया के रंगमच पर आश्चर्यजनक रूप मे प्रकट होना चाहते है। उन्हे अपनी उस अपवित्र अभिलाषा की पूर्ति के लिए कई अंशो से नकली वेश धारण करना पड़ता है। एक लेखक को उपदेश देते हुए

व्यक्तियों का कोई साथ नहीं देता। गरीबी, लज्जा, झंझट, भय, सन्देह; रुदन, क्रन्दन, और विलाप आदि उसका पीछा कर उसे नष्ट कर देते हैं। जिसमे दुनिया का अविश्वास हो गया, उसके लिए फिर यह दुनिया 'नर्क' रूप मे हो जाती है। इस नर्क से बढ़कर दुःखदाई दूसरा नरक नही है।

विश्वासपात्र व्यक्ति के चार गुण होते हैं।

सादगी, प्रवेश

आकर्षण, बल

सादगी प्राकृतिक गुण है। सादगी को बाहरी सजावट वा कलई की आवश्यकता नही रहती। प्रकृति के भण्डार की समस्त वस्तुयें क्यो सुन्दर दीखती हैं? हम उन्हें उसी रूप मे देखते हैं जिस रूप मे वे हैं, या जिस रूप मे उन्हें होना चाहिये। कारण उन्हें दूसरा रूप धारण करना अच्छा नहीं लगता। वे वाह्य आवरण से घृणा करती हैं। कोई भी पुष्प, जिसकी सुन्दरता पर दर्शक मुग्ध हो जाता है, यदि वह अपने नकली रूप मे प्रकट हो तो दर्शक-मात्र उससे घृणा करने लगेगा। प्रकृति को देखने के बहाने हम असलियत को देखते है। उसकी सुन्दरता तथा पूर्णता हमें मुग्ध कर लेती है। हरएक वस्तु मे अपनी अनोखी परिपक्वता होती है और वह अपनी सुन्दरता को न जानते हुए भी फैलाती रहती है।

आज कल के पहुँचे हुए महापुरुष 'प्रकृति को वापस जावो' (गो बेक टू नेचर) का उपदेश दे रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि

वे चाहते है कि मनुष्य कृत्रिम आवरणो का बहिष्कार कर प्राकृतिक रूप धारण करे। देहात मे एक झोपड़ी और जोतने बोने के लिए थोड़ा सा खेत—यही उस प्राकृति का एक स्वरूप है। परन्तु इस रूप को अपनाकर हमे उस समय तक कोई लाभ नही होगा, जब तक कि हम अपने दुर्गुणो को साथ रखते है। कारण ये दुर्गुण आप कहीं भी रहेंगे, आपका नाश करेंगे।

कोलाहलमय समाज के दूषित वातावरण से जो शान्ति पाना चाहते है, उन व्यक्तियो को, दिहात के एकान्तमय वातावरण मे बसना उचित है परन्तु वहाँ पहुँचकर भी यदि उन्होने सादगी न अपनाई और वही तड़क भड़क कायम रखा जो उन्होने नगर मे रखा था तो उस दिहात का भी वातावरण अशुद्ध हो जायगा।

मानव समाज पहिले पशु-श्रेणी के अन्तर्गत समझा जाता था। कुछ बौद्धिक शक्ति के विचार से ही नहीं—वरन् सादगी के विचार से भी। पर अब वह उस श्रेणी से पूर्णरूप से अलग होकर देवत्व की ओर बढ़ रहा है। प्रतिभावान व्यक्ति सादगी के साक्षात स्वरूप होते हैं। वे मानने से नही वरन् वे स्वयम् वैसा होते है। छोटे मस्तिष्क वाले व्यक्ति शैली और प्रभाव का अध्ययन करते हैं। वे दुनिया के रंगमच पर आश्चर्यजनक रूप में प्रकट होना चाहते है। उन्हे अपनी उस अपवित्र अभिलाषा की पूर्ति के लिए कई अंशो मे नकली वेश धारण करना पड़ता है। एक लेखक को उपदेश देते हुए

अपने को महान-पुरुष समझने वाले एक सज्जन ने कहा—'तमाम जीवन मे एक पुस्तक लिखो पर अच्छी लिखो।' हमारा कहना है उक्त महापुरुष यदि लेखक होते तो अपने तीन चार 'जीवन' मे भी एक अच्छी 'पुस्तक' नहीं लिख सकते। कारण वे पुस्तक मे "अच्छापन" नही दिखाना चाहते, उसमे "अपनापन" दिखाना चाहते हैं। क्या कोई लेखक जान बूझकर खराव पुस्तक लिखता है?

अच्छी पुस्तक लिखने वाले के लिए अपने जीवन का कुछ भाग नहीं, वरन् सारा जीवन अच्छाई के अध्ययन मे लगा देना होगा। अच्छाइयों को ढूँढ़ते समय उसे यह भूल जाना होगा कि वास्तव मे वह भी कुछ अच्छा कार्य कर सकता है। उसके संगीत, चित्रण या लेख के भीतर सहस्त्रों कडुये अनुभवों, सहस्रो असफलताओ, सहस्रो विजय तथा प्रसन्नताओ का आभास मिलना चाहिये। उसके कार्य की शैली मे 'अपनापन' होना चाहिये।

अपनी आत्मिक एवम् चारित्र्य सम्वन्धी अनुभूतियो की रक्षा करते हुए जो सादगी को अपनाते हैं, वे महानात्माओं की श्रेणी में आते हैं। वे किसी 'सत्य' को छिपाते नहीं। वे राख छोड़ देते हैं और सोने को छान कर निकाल लेते हैं। जहाँ विश्व-तन्मयता है, वहीं सादगी का रहना अनिवार्य है। परन्तु वह सादगी वैसी ही सादगी होनी चाहिये जैसी की प्रकृति मे

निहित हैं। हमे सादगी को अपनाते हुए अपने सौन्दर्य का रक्षा करनी होगी।

आकर्षण, सादगी का प्रतिरूप है। तमाम प्राकृतिक वस्तुओ मे आकर्षण होता है। मनुष्य की प्रकृति का उल्लेख करते हुए हम उसको 'व्यक्तिगत-प्रभाव के नाम से पुकारते है। कुछ लोग आज कल 'व्यक्तिगत प्रभाव' को बढ़ाने के नुसखे बेचने का व्यवसाय कर रहे है। मोटे मोटे अक्षरो मे उनके विज्ञापन प्रकाशित होते रहते है। जो लोग व्यक्तिगत प्रभाव से रहित है, उनमे 'व्यक्तिगत प्रभाव' का गुण भरना इतना सरल नहीं है जितना सरल विज्ञापन कर देना है। व्यक्तिगत प्रभाव कोई बेचने वा खरीदने की वस्तु नही है। जो अपना 'व्यक्तिगत प्रभाव' जान बूझकर जमाना चाहते हैं, वे नहीं जमा सकते। कारण "मै ऐसा करना चाहता हूँ" ऐसा वे ही लोग कहते है जिनमे अभिमान की भावना रहती है। और जिनमें अभिमान की भावना है, उनका व्यक्तिगत प्रभाव कभी भी स्थापित नही हो सकता। कारण वे अपने अभिमान की रक्षा के लिए अनेको कृत्रिम उपायो की शरण लेते है; जिससे यह प्रमाणित हो जाता है कि उक्त व्यक्ति मे कोई वास्तविक विभूति नहीं है, नही तो वह काल्पनिक विभूतियो के पीछे क्यो दौड़ता? परन्तु, मस्तिष्क की सुन्दरता एवम् चारित्र्य-बल की दृढ़ता—ये दोनो वस्तुयें कृत्रिम उपायो से नही पाई जा सकती। योग्यता, बुद्धि, प्रतिभा, लगन, सौन्दर्य आदि कोई भी वस्तु, मनुष्य-

स्वभाव के अन्तर्गत ऐसी नहीं है जिसकी तुलना हम मस्तिष्क की प्रौढ़ता तथा हृदय की महानता से कर सकें। स्त्री हो या पुरुष—हृदय की महानता उनके वास्तविक सौन्दर्य को उद्भासित करने वाला एक महान गुण है। मनुष्य-स्वभाव की यह एक अपूर्व श्री है। शारीरिक सौन्दर्य का, इसके अभाव मे कोई अस्तित्व नही।

समाज के नेताओं के प्रभाव का कारण उनकी विश्वसनीयता ही होती है। और उनकी विश्वसनीयता का कारण उनका प्रभाव होता है। नेता कितना ही विद्वान वा बुद्धिमान क्यों न हो, परन्तु उसकी प्रतिष्ठा तभी स्थाई होती है जब कि वे जनता के विश्वासपात्र हो। कुछ समय तक के लिए वह प्रसिद्धि की नौका पर बैठकर जनता के प्रशंसारूपी पतवार के सहारे संसार-रूपी समुद्र के वक्षस्थल पर नौका-विहार करने का साहस कर सकता है, परन्तु अविश्वास की आँधी के आने पर न वह पतवार काम देगा और न वह नौका। वह आँधी उसे गहरे पानी मे विलीन कर देगी। वह अपनी चिकनी-चुपड़ी बातो से अधिक दिन तक जनता को धोखे मे डालकर नहीं रख सकता। एक आकर्षक युवती को ले लीजिये। आकर्षक से मेरा अभिप्राय प्राकृतिक सौन्दर्य से नहीं है, कृत्रिम सजावटी सौन्दर्य से है। जिस समय उत्सुक होकर लोग उसकी ओर देखते है उस समय वह समझती है, लोग उसके सौन्दर्य को देख रहे हैं, परन्तु यह बात नहीं है। लोग उसके सौन्दर्य को नही वरन् उसके कृत्रिम

सजावट को देखते है और उनकी उस दृष्टि मे होती है घृणा की एक अस्फुट भावना। यदि वह सुन्दरी है तो अपने लिये। यदि उसमे आकर्षण है तो केवल वही उससे प्रभावित हो सकती है न कि कोई अन्य ?

विश्वसनीय व्यक्ति, अपने तई', अपनी सुन्दरता, अपनी बुद्धि, प्रतिभा, योग्यता, प्रभुता, गुण, आदि का अभिमान नही करते। वे अपनी उपर्युक्त वस्तुओ के प्रति उदासीन-से रहते हैं। यही कारण है जो वे सभी को आकर्षित कर लेते हैं। सबका विश्वासपात्र बन जाते है, और सब के प्रेम के भाजन बन जाते है।

जो विश्वासी व्यक्ति है उसकी पैनी दृष्टि बड़ी दूर तक जाती है, अन्धकार से अन्धकार मे भी प्रवेश कर जाती है। वह एक दृष्टि से तमाम नकली वस्तुओ को पहचान लेता है। धोखेबाज उसके आस पास टिकते नहीं। जिसने अपने हृदय से तमाम कृत्रिमता को निकाल फेंका है, जिसने केवल असलियत को ही स्थान दे रखा है, वह एक अपूर्व सफल-शक्ति का संचय करता है। जो स्वयम् अपने को धोखा नही देता उसे दूसरा कोई धोखा नहीं दे सकता। वह स्वयम् अपना रक्षक सिद्ध होता है। मनुष्य उसके लिए पुस्तक के खुले हुए पन्नो के समान है जिसे वह आसानी से पढ़ लेता है।

जिसमे गहराई मे प्रवेश करने का गुण है उसमे बल निहित

होता है, वही अपने ध्येय को प्राप्त करता है। कबीर ने लिखा है—

जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ।
हौ बौरी ढूँढन गई रही किनारे बैठ॥

ज्ञान का दूसरा नाम बल है। ज्ञान से ही बल का उपार्जन होता है। ज्ञान द्वारा उपार्जित बल पहिले छोटे प्रमाण मे रहता है, फिर धीरे धीरे बड़े प्रमाण से होकर पूर्ण रूप मे विकसित हो जाता है। विश्वासी व्यक्ति जितना भी कार्य करता है, सब पर अपने चरित्र की छाप लगा देता है। वह संयोग देखकर कोई शब्द बोल देता है, और उस शब्द से एक प्रभावित हो उठता है। दूसरा अपने प्रभाव को तीसरे पर प्रकट करता है, और वह तीसरा, उस प्रभाव से उत्पन्न हुए विचार को सहस्रों कोस दूर बैठे हुए व्यक्ति पर व्यक्त करता है। ऐसी शक्ति, ऐसा बल स्वयम् एक सफलता है, जिसका मूल्य पैसे रुपयो मे नहीं आँका जा सकता। चरित्र-रूपी निधि के उस रत्न को कोई भी सिक्कारूपी धन से नहीं खरीद सकता।

विश्वासनीयता का यह पाँचवाँ स्तम्भ समाप्त होता है। इसको साधना से उत्थान प्राप्ति का मार्ग सरल होता हुआ प्रतीत होगा।

सहानुभूति

सहानुभूति सच्ची और देश काल के अनुसार होनी चाहिये। दान देना धर्म है, केवल इसी नियम को मानना और यह न विचार करना कि किस स्थान पर, कैसे पात्र को दान देना चाहिये, समाज के साथ अन्याय करना है। ऐसे दान का कोई अर्थ नहीं। ऐसे दान की स्मृति भी थोड़े ही दिनो मे मिट जाती है। मित्र के विछोह के समय दाढ़ मार मारकर रोना अथवा दूर के किसी सम्बन्धी पर पड़ी हुई विपत्ति का समाचार सुनकर आँसू गिराना सहानुभूति नहीं कही जाती। अत्याचारी एवम् अन्यायी के विरुद्ध, शब्दो मे विष उगलना भी यह प्रमा-

सित नहीं करता है कि आप सताये गये एवम् दुखितो के प्रति सहानुभूति रखते हैं।

यदि घर पर अपनी स्त्री को भर पेट भोजन न देने वाला, बच्चों को मारने वाला, नौकर को वेतन न देने वाला, अपने व्यवहारों से पड़ोसियों की नाक में दम कर देने वाला व्यक्ति सौ कोस दूर पर बसने वाले व्यक्ति के साथ सहानुभूति दिखाता है तो उसकी सहानुभूति किस काम की? उसके वे आँसू जो वह संसार के विपद्ग्रस्तों के लिये बहाया करता है, किस काम का ?

महर्षि इमर्सन का कहना है कि अपने बच्चे को प्यार करो, नम्र और अच्छे स्वभाव वाले बनकर पड़ोसी को आनन्द दो। प्रत्येक स्थिति के व्यक्तियो पर अपना प्रेम क्यो प्रकट करते हो? वह व्यर्थ है। पहिले घर वालों पर ही अपना प्यार प्रदर्शित करो। मनुष्य की परीक्षा उसके घरेलू व्यवहार से ही करनी चाहिये। बाहर तो मनुष्य दिखावे के लिए भी बहुत कुछ करता रहता है। तनिक उस व्यक्ति की बात सोचिये जो अपने कामो से अपने परिवार वालों को तो दुखी बनाये रहता है, परन्तु जब बाढ़-पीड़ितो की सहायता के लिए दौड़ता है तो हँसी आती है। अपनी क्रोधरूपी बाढ़ से समूचे परिवार को सदा पीड़ित रखने वाला वह व्यक्ति क्या बाढ़पीड़ितो की सहायता कर सकेगा? हमे तो इसमे सन्देह है। ऐसी सहायता सहानुभूति का नगा प्रदर्शन करना है। पहिले घर मे चिराग

जलाओ, फिर मन्दिर मे। पहिले घर वालो का पेट भरो तब अनाथालय को चन्दा दो। जब तुम्हारा ही परिवार अनाथाश्रम बना हुआ है तब तुम अनाथाश्रम को चन्दा देने का क्यो स्वॉग करते हो? घर पर मांस खाने वाले व्यक्ति जीव-दया-उपकारिणि सभा का सदस्य बनकर जीवो का भला क्या उपकार कर सकेंगे? यह सोचने की बात है। यद्यपि सहानुभूति-रूपी कूप, ऑसूरूपी जल-प्रवाह को सिक्त रख सकता है, परन्तु अधिकतर देखा गया है कि वह ऑसू का प्रवाह स्वार्थरूपी अन्धकार कूप से ही जल पाता है। सौ पचास रुपये लगा कर प्याऊ बनवा उसपर मोटे मोटे अक्षरो मे अपना नाम लिखवाकर सहानुभूति सूचित करने की क्या आवश्यकता है? सौ रुपये मे तो ई० आई० आर० स्टेशन पर आपके नाम का पोस्टर साल भर भी तो नहीं रखा जा सकता, जब कि वह पत्थर का प्याऊ सैकड़ो वर्ष तक आप के नाम का विज्ञापन करता रहता है। उस व्यक्ति ने प्याऊ नहीं बनवाया है, वरन् अपना विज्ञापन किया है।

सहानुभूति जीवन का एक बहुत बड़ा मर्म है, उसकी जड़ बड़ी गहराई तक जाती है। सहानुभूति का सच्चा रूप प्रदर्शन में नहीं बल्कि मौनावलम्बन मे है। कठोरता मे नहीं, कोमलता में है, उद्दण्डता मे नहीं, विनम्र चरित्र मे है, प्रकट होने मे नहीं, छिपे रहने मे है।

सच्चे सहानुभूतिवाले व्यक्ति, ऑसू नहीं गिराते। अपने

को सदा काबू मे रखते हैं, दृढ़ होते हैं। जब वे किसी को दुखी देखते हैं तो दौड़कर उसके पास जा आँसू नहीं बहाते। उनकी इस आदत को छिछोरे दिमाग के लोग उदासीनता की संज्ञा दे बैठते हैं। परन्तु जो सच्चे सहानुभूतिवाले हैं, वे दुखियों के पास जाकर आँसू बहायें या न बहायें, उनकी आँखो के भाव छिपे नहीं रहते। उन्हें कोई भी सहृदय व्यक्ति पहचान सकता है। दिखावटी सहानुभूतिवाला व्यक्ति जिस समय दुखिया के प्रति, शब्दों मे अपने भाव को प्रदर्शित करता है, आँखो से आँसू बहाता रहता है, हाय! हाय! करता रहता है, तब तक सच्चा सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति हाँफता हुआ अपने घर पहुँच जाता है, और वहाँ से एक थाल मे पकापकाया भोजन उस अभागे दुखिया के लिए चुपचाप भेज देता है, वह पीछे से आकर उस दुखिया के पास भोजन रखकर चुपचाप चला जाता है। लोग समझते हैं, स्वयम् परमेश्वर उस दुखिया के दु:ख से द्रवित होकर भोजन दे गया है। अवश्य ही ऐसी सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति यदि साक्षात् परमेश्वर नहीं, तो उसके अत्यन्त सन्निकट का रहने वाला प्राणी समझा जाता है। सहानुभूति का अभाव जहाँ दुःखी व्यक्ति का उपहास करने, उसकी भर्त्सना करने, उसपर क्रोध प्रकट करने, उसकी निन्दा करने आदि बातों मे पाया जाता है, वहाँ मौखिक सहानुभूति प्रदर्शन मे भी पाया जाता है। सहानुभूति के अभाव का कारण घृणा है, अभिमान है। प्रेम, घृणा और अभिमान का मूल कारण

अज्ञान है। प्रेम का सम्बन्ध ज्ञान से है। अपने को सबसे अलग और अकेला समझना अहंभाव-सूचक है। अपने ध्येय, लक्ष्य तथा विचार को औरो से भिन्न समझते हुए औरो को त्रुटिपूर्ण समझ लेना एवम् अपने को दोष रहित करार देना आज कल की साधारण बात है। सहानुभूति मनुष्य को 'अकेले-पन' की अवस्था से बहुत ऊँचे ले जाती है। सबके हृदय मे उसका वास हो जाता है। सब लोग उसे अपना समझने लगते है। वह अपने को सब मे मिला देता है और सबकी तरह हो जाता है। किसी के व्रण को चीरते समय उससे यह पूछना कि तुम्हे कैसा अनुभव हो रहा है, धृष्टता है। उस समय अपना भाव उसी रोगी सा बना लेना चाहिये। मान लीजिये यदि आपका व्रण चीरा जाता तो आपको कैसा अनुभव होता ? फिर उसी अनुभव से अपने मन की उत्कंठा जिसका गलत नाम 'सहानु-भूति' की जा रही है, शान्त कर लीजिये। दुःख मे सहायता, तथा कोमलता की आवश्यकता है, उत्कंठा की नही। सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति उस दुःखी के दुःख का अनुभव करता है और तुरन्त सहायता पहुँचाता है।

सहानुभूति और अभिमान का कोई साथ नहीं। आत्म-प्रशंसा का प्रवेश हुआ नही कि सहानुभूति वहिर्गत हो जाती है। यदि आप यह व्यक्त करते है कि आपने किसी के साथ नेकी की परन्तु आपको वदले मे वदी मिली तो आप सच्चे नेकी करने वाले नही है। आप मे तव वहुत वड़ी कमी है। नेकी भी कहीं

बदला लेने के लिये की जाती है? नेकी करने वाला नेकी के नाम पर किये गये कामो को भूल जाता है। यही सहानुभूति का सच्चा स्वरूप है।

मूल तत्व मे सहानुभूति उस भाव का नाम है जिस भाव मे प्रभावित होकर आप भूखे के साथ भूखे और नङ्गे के साथ नङ्गा रह जाते हैं। सहानुभूति रखने वाला व्यक्ति संयुक्त व्यक्ति होता है। वह एक रहते हुए भी अनेक है, वह दो आँख रखते हुए भी अनेकों आँखें रखता है। वह एक ओर देखता हुआ भी चारो ओर अपनी निगाहे दौड़ाता रहता है। वह अपनी ही नहीं वरन् औरो की भी आँखों से देखता है। दूसरो के कानो द्वारा सुनता है, औरो के मस्तिष्क से सोचता है, औरो क हृदय द्वारा अनुभव करता है। इस प्रकार वह उन लोगो को भी समझ लेता है जिनसे उसका कोई सरोकार भी नही है, जिन्हें वह जानता तक नहीं। पर उनके जीवन का अर्थ उसपर व्यक्त हो जाता है और वह उनके साथ सद्भावना के रज्जु मे बँध जाता है।

राजा रन्तिदेव का कथन है, कि न तो मुझे राज्य की इच्छा है और न राज्य-सुख की, मैं प्राणी मात्र के दुःख का नाश करना चाहता हूँ। राजा रन्तिदेव के ये शाब्दिक भाव नही है। उन्होने अपने इस भाव को कार्य-रूप मे परिणत कर दिखाया है। वही व्यक्ति सच्ची सहानुभूति रखनेवाला कहा जा सकता है जिसे गरीब आशाभरी दृष्टि से देखें, जो गरीबों की भूख को अपनी भूख समझे, जो उनकी झोपड़ी मे उनके साथ रह सके, जो उनकी गुदड़ी को

अपने शरीर पर रख सकें, जो उस गरीब का साथ जितने क्षण रहे उतने क्षण यह भूला रहे कि वह लक्ष्मी का वर-पुत्र है। यदि आपने दुखियो की सेवा के लिये कोई काम किया है तो यह मत समझिये कि आपने उस दुखिया की सेवा की है, वरन् आपने जगत्पिता की सेवा की है। 'आबू-विन' आदम, एक बहुत बड़े महात्मा हो गए हैं। एक रात्रि को स्वप्न मे उन्हे देवदूतो का दर्शन हुआ। पूछने पर देवदूतो ने बताया कि वह, उन लोगो की नामावली तैयार कर रहा है जो कि ईश्वर के भक्त है और जो ईश्वर को प्यार करते हैं। आबू का चेहरा उदास हो गया। उन्होने कहा—मेरा नाम इस सूची मे क्यो कर हो सकेगा? क्योकि मै तो अपने भाइयो को प्यार करता हूँ। (भाई का अर्थ मानव-समाज से है) देवदूत अन्तर्ध्यान हो गया। दूसरी रात्रि को आबू ने स्वप्न मे फिर उसी देवदूत को देखा। देवदूत के हाथ मे एक सूची थी। आबू ने पूछा—क्यो आपकी सूची तैयार हो गई! देवदूत ने कहा—हॉ! और फिर आबू की प्रार्थना पर वह सूची को पढ़ने लगा। सब से प्रथम नाम आबू का ही था। आबू को आश्चर्य हुआ। देवदूत ने आबू को आश्चर्यान्वित हुआ देखकर कहा—आबू! ईश्वर उन व्यक्तियों को सब से अधिक प्यार करता है जो अपने भाइयो को प्यार करते हैं।

अर्थात् सहानुभूति दिखलाने वाला व्यक्ति केवल उसी व्यक्ति द्वारा नही समझा जाता जिसके प्रति वह सहानुभूति दिखाता है, वरन् ईश्वर भी उसे प्यार करता है। सहानुभूति रखनेवाले पुरुष

का वासस्थान जन-समाज का हृदय होता है। फलतः वह सैकड़ों आत्माओ को एक 'प्रेम रज्जु मे' बाँधने का काम कर देता है। जब उनमे से एक भी दुःखी होता है तो वह रज्जु खिंच उठती है, फलतः हम सभी को उसका अनुभव हो जाता है। जब वे प्रसन्न होते हैं तब हम भी प्रसन्न होते हैं। जब वे कभी किसी आपदा में फँस जाते हैं तब हम भी आपदग्रस्त हो जाते हैं, जब उनकी अप्रतिष्ठा होती है तब हमे भी उसका अनुभव होता है। जिसके हृदय मे इस प्रकार का भाव है वह कभी भी निन्दा या अपयश का पात्र नहीं बन सकता। वह अपने किसी भी साथी पर विचार-शून्य आक्षेप नहीं कर सकता, वह कभी भी अपने साथी पर अत्याचारपूर्ण आक्रमण नहीं कर सकता। इसका कारण यह है कि उसका हृदय अत्यन्त कोमल एवम् मक्खन की तरह मुलायम होता है।

परन्तु इस प्रकार की प्रथम श्रेणी की सहानुभूति उसी व्यक्ति के हृदय मे उत्पन्न हो सकती है, जिसमे प्रेम का श्रोत निरन्तर बहता है, जिसने स्वयम् दुःख उठाया है तथा चिन्ता के घने अन्धकार मे घूम चुका है। जिसके हृदय मे विचार-श्रेष्ठता और निस्वार्थता को स्थान मिला है, वही व्यक्ति पूर्णरूप से सहानुभूति दिखला सकता है। सहानुभूति दिखलाना सरल नहीं, यह उसी व्यक्ति मे पायी जा सकती है, जिसने चिन्ता और दुःख का बड़े से बड़ा अनुभव कर लिया है। साथ ही वह अनुभव भी ऐसा हो, जिसमे संसार के प्रति घृणा की भावना के स्थान

पर संसार के प्रति सच्ची सहानुभूति की भावना हो।

जो व्यक्ति इतना दुःख उठाता है कि, आगे अब उठाने को रही न जाय, तो उसकी दुःख-जनित वुद्धि ही उसे इस योग्य बना देती है कि वह औरो के दुःख को और भी अच्छी तरह समझे। अपने इस कटु अनुभव से वह दुःखियो के दुःख को छुड़ाने का उपाय सोचने लगता है और तब वह दुःखियो के लिए एक प्रकाश-स्तम्भ बन जाता है। प्रफुल्लित हृदय वाले निराश तथा व्यथित व्यक्तियो के लिए आशा की ज्योति बन जाते हैं। वह उनके मरुस्थल-रूपी जीवन के लिये मीठे जल की धारा बन जाता है। जिस प्रकार एक माता अपने दुःखी बच्चे की आह का अनुभव करती है ठीक उसी प्रकार सच्चा सहानुभूति रखनेवाला व्यक्ति दुःखियो के प्रति अपनी भावना रखता है।

यही ऊँची से ऊँची सहानुभूति का स्वरूप है। सहानुभूति का यह स्वरूप अत्यन्त पवित्र है। परन्तु इससे कम मात्रा की भी सहानुभूति साधारण नही है, उससे भी मानव-समाज का बहुत बड़ा हित हो सकता है। ऐसी भी सहानुभूति की, हर जगह, हर अवस्था मे मॉग बनी रहती है। यद्यपि हमे प्रतिक्षण सहानुभूति रखनेवाले व्यक्तियो से भेट होती रहती हैं, पर कठोर निर्दयी तथा अत्याचारी व्यक्तियो की भी कमी नहीं है। इन दुर्गुणों के रखने वाले जहॉ औरो को कष्ट पहुँचाते है वहीं स्वयम् भी दुःख पाते हैं। ऐसे ही स्वभाव रखने वाले अपने

व्यापार में असफल भी होते हैं। जो क्रोध मे सदा जलता रहता है, जिसे बात बात पर क्रोध आ जाता है, जिसका स्वभाव कड़ा है, जिसके व्यवहार मे शुष्कता है अथवा जिसके हृदय मे सहानुभूति का श्रोत प्रवाहित नही होता, ऐसा व्यक्ति अन्त मे भयङ्कर विनाश को प्राप्त होगा—यह ध्रुव सत्य है। उसकी अहमन्यता, कठोरता एवम् निर्दयता उसे अन्य लोगो से अलग करा देगी। यहाँ तक कि उसके सम्बन्धी भी उसे छोड़ देंगे। फलतः उसके जीवन से, सफलता देने वाली शक्ति से असहयोग हो जायगा। वह अकेला, अपनी असफलता पर आँसू बहाता रहेगा।

साधारण व्यापार मे भी ग्राहक उसी दुकानदार के यहाँ जायगा जिससे उसे सहानुभूति की आशा होगी। यदि ग्राहकों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध कायम रखने मे सफलता प्राप्त करनी हो तो उसे अपने हृदय मे सहानुभूति लानी होगी। योग्य व्यक्ति सहानुभूति से रहित होने की दशा में ताकता ही रह जायगा। यदि कोई व्यक्ति राजमन्त्री हो जाय तो उसकी एक निर्दयतापूर्ण हंसी, उसकी सारी प्रतिष्ठा एवम् प्रभाव को नष्ट कर सकती है। उसकी प्रतिष्ठा के पहिले उसका प्रभाव नष्ट हो जायगा; क्योकि जो लोग उक्त राजमन्त्री के ही बल पर जीते हैं, वे भी उसकी निर्दयता से दुःखी होगे।

यदि कोई व्यापारी धार्मिक बनने का विज्ञापन करता है, जनता उसके व्यापार मे भी धार्मिक भाव ही देखना चाहेगी। मिलावटी तथा चर्बी मिला घी बेचनेवाला व्यक्ति जब चन्दन

पोतकर शिव दर्शन को जाता है तब जनता समझती है कि उस घी में भी उसी चन्दन की भाँति सुगन्धि होगी। जिस प्रकार वह शिव के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करता है उसी भाँति उसे सुगन्धियुक्त और स्वच्छ घी बेचना चाहिये।

सहानुभूति एक सार्वभौमिक गुण है, उसी प्रकार दुःख भा एक सार्वभौमिक वस्तु है। पशु भी अपने प्रति सहानुभूति दिखानेवाले के साथ पशुतापूर्ण व्यवहार नहीं करते। सुप्रसिद्ध गुलाम अन्ड्रोक्लिस ने एक बार जिस शेर के पन्जे से काँटा निकाला था, उसी शेर के सामने भोजन के लिए डाल दिये जाने पर जो कि तीन दिन का भूखा था, जीता छूट गया।

जो स्वार्थी है वही अपनी रक्षा की बात सोचा करते हैं परन्तु जिनके हृदय में सहानुभूति है वे औरों की रक्षा किया करते हैं। वे अपना धन व्यय कर दूसरों का उपकार करते हैं। सच्ची सहानुभूति का जहाँ प्रश्न है वहाँ अपने धन के व्यय का कोई प्रश्न नहीं उठता।

परहित बस जिनके मनमाहीं।
तिनकहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥

जहाँ अपनी रक्षा से थोड़े भी सुख की प्राप्ति होती है, वहाँ, औरों के साथ सहानुभूति दिखाने से जो आशीर्वाद मिलता है, वह बहुमुखी तथा बृहतरूप में सुख देने वाला सिद्ध होता है।

अब एक प्रश्न यह हो सकता है कि, एक व्यापारी व्यक्ति जिसका ध्येय अपने व्यापार को बढ़ाना है, क्योकर स्वार्थ-त्यागी बन सकता है। हम कहते है कि हर एक व्यक्ति अपनी अपनी परिस्थिति के अनुसार त्याग कर सकता है। जिसका जितना साधन हो वह उतना तो लाभ अवश्य ही कर सकता है, इसमे किसी को सन्देह करने का स्थान नहीं।

एक राजा और धोबी साथ-साथ मरे। राजा के लिए स्वर्ग से एक बैलगाड़ी आयी पर धोबी के लिये आया एक सुन्दर-विमान। राजा ने ईश्वर से फरयाद की—महाराज! मृत्यु के समय मैने दस सहस्त्र रुपया दान किया पर मेरे लिये यह बलगाड़ी भेजी गई है और मेरे ही राज्य का यह निकृष्ट धोबी मेरे सामने विमान पर चढ़ाकर लाया गया है। क्या इसने मुझसे अधिक दान किया है? ईश्वर ने कहा—इसने कपड़े धोने का अपना अधिकार दूसरे को दान मे दे दिया है। यद्यपि वह अधिकार मूल्य मे कुछ भी नहीं, फिर भी इसने अपनी आजीविका का साधन ही दान कर दिया और तुम लाखो की सम्पत्ति का मालिक होते हुए भी केवल दस सहस्त्र रुपया, सो भी औरो से लूट खसोट कर—दान किया। तुम्हारा दान धोबी के दान के समक्ष कुछ भी मूल्य नहीं रखता।

प्राचीन समय के क्षत्री निहत्थो पर तलवार नहीं उठाते थे। विपक्षी के हाथ मे अस्त्र देखकर ही उससे लड़ते थे। यदि उसके पास अस्त्र न होता तो अपनी ओर से एक दूसरा अस्त्र

देते थे। कितना बड़ा त्याग है! अपना ही सिर काटने के लिए स्वयम् तलवार देना! सुना है, बाजीराव-पेशवा जब पराजित होकर जेल भेजे जाने लगे तो उन्होंने अंग्रेज जेनरल से तलवार मांगी और कहा कि यदि मेरे हाथ में तलवार देकर तुम मुझे गिरफ्तार कर सको तो तुम्हारी बहादुरी है। परन्तु अंग्रेज जेनरल को इस प्रकार की बहादुरी से क्या काम? निहत्थे बाजीराव कैद कर बिठूर भेज दिये गए।

सहानुभूति के चार भाई है।

१ दयालुता — २ सज्जनता

३ उदारता, — ४ हृदय की परख

दयालुता मनुष्य का स्वाभाविक गुण है, परन्तु इसे ख्याति तभी प्राप्त हो सकती है जब कि इसका सदुपयोग किया जाय। यह महान गुण भी उस समय मूल्य-रहित हो जाता है जब कि आपमें बदले की भावना उत्पन्न हो जाती है। किसी के साथ एक समय दया दिखाना और फिर परिस्थिति बदल जाने पर उसे पात्र जानते हुए भी, उसपर दयालुता न दिखाना एक कमजोरी है। इसमे स्वार्थान्धता की गन्ध आती है। कारण आप दया उसी व्यक्ति-विशेष के साथ दिखाना चाहते हैं जो आपको प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता है। सच्ची दयालुता दर्शनी-हुण्डी नहीं है जिसे देखते ही बैंक वाला आपको रुपया दे देगा।

कुछ ऐसे भी कार्य है जिनके लिए हमे पश्चात्ताप करना पड़ता है, परन्तु ऐसे सभी कार्यों मे शुद्ध दया की भावना का अभाव रहता है। साथ ही कुछ ऐसे भी कार्य हैं जिनके लिए मनुष्य को कभी पश्चात्ताप नहीं होता, कारण उन कामों मे दया की भावना भरी होती है। जब कोई व्यक्ति किसी के साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार कर बैठता है, तब उसकी आत्मा दुःखी हो उठती है और वह एक न एक दिन उस व्यक्ति के पास अवश्य पहुंचता है। अपने निर्दयतापूर्ण कार्य के लिए उससे क्षमाप्रार्थी होता है, परन्तु जिसने निर्दयतापूर्ण कार्य किया ही नहीं उसे क्षमा माँगने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वह सदा आनन्द का अनुभव करता रहता है।

निर्दयता मनुष्य के चरित्र के विकास मे बाधा पहुंचाती है। वह चेहरे की रंगत को बिगाड़ देती है, वह पूर्णता को नहीं प्राप्त होने देती। दयालुता से चरित्र की शोभा बढ़ती है, दयालुता से मुखाकृति की आभा दमकती है और वह उस श्रेणी की सफलता प्राप्त कर लेता है, जिस श्रेणी की सफलता कठिनता से मिलती है।

दयालुता ही का व्यापक नाम उदारता है। दयालुता और उदारता मे भाई बहन का सम्बन्ध है। स्वतन्त्र, स्पष्ट तथा विशाल चरित्रवान व्यक्ति सर्वदा आकर्षक तथा प्रभावशाली बना रहता है। निर्दयता से सर्वदा पश्चात्ताप करना पड़ता है। निर्दयता

जीवन का अन्धकारपूर्ण अङ्ग है और उदारता तथा दयालुता दोनों जीवन के प्रकाशमय अङ्ग हैं।

देना उतना ही आवश्यक कर्त्तव्य है जितना कि पावना। जो सर्वदा पाने को ही लालायित रहता है, कुछ देता नहीं, वह आगे कुछ भी नहीं पा सकता।

संसार के जितने भी धर्मोपदेशक हो गये हैं सभी ने दान की महत्ता पर विशेष जोर दिया है। कारण दान, उन्नति एवम् विकास का सबसे बड़ा मार्ग है। इसी के द्वारा हम निस्वार्थता की ऊंची से ऊंची भावना का रसास्वादन कर पाते हैं। दानशीलता—प्रमाणित करती है कि हम आत्मिक तथा सामाजिक सम्बन्ध को मानते हैं तथा जो कुछ हमने कमाया है, समाज के लिए थोड़े या अधिक अंश में उसका त्याग कर सकते हैं। वह लालची व्यक्ति, जो जितना ही अधिक पाता है उतना ही और की इच्छा करता है तथा उपार्जित धन का कोई भी भाग समाज के लिए देना नहीं चाहता, वह अपने को सच्चे आनन्द से वंचित रखता है। वह उसे तभी मिल सकता है जब कि वह कुछ देना भी सीख ले। उसे हृदय का उदार तथा हाथ का खुला हुआ होना चाहिये। धन देना ही देना नहीं कहा जाता। यदि किसी देश की सरकार अपनी प्रजा को लेखन, भाषण, मुद्रण तथा विचार सम्बन्धी स्वतन्त्रता दे देती है तो उसे बहुत बड़ा दान समझना चाहिये।

सज्जनता देवताओं का गुण है। संसार का यह एक ही

गुण है जो इसी संसार का होते हुए भी इस संसार के प्राणियो में बहुत कम पाया जाता है । इसकी प्राप्ति, बड़े आत्मानुशासन के बाद मिलती है । यह तभी मनुष्य के पास टिक सकती है जब कि मनुष्य अपनी पशुवृत्ति का परित्याग कर दे । यदि कोई ऐसा गुण है जो अन्य श्रेणी के व्यक्तियो से अधिक धार्मिक श्रेणी के व्यक्तियो मे पाया जाता है तो वह यही 'सज्जनता' है। कारण यह देवत्व-प्रधान गुण है । वह सज्जन व्यक्ति जिसका हृदय उदार है और जिसके विचार ऊँचे हैं, बिना भेदभाव के सब के द्वारा पूजित होता है, वह चाहे किसी समाज व संस्था का व्यक्ति क्यों न हो ? इसका न कोई परवाह करता है और न खोज ही। अन्य लोग लड़ाकू स्वभाव के होते है परन्तु सज्जन व्यक्ति कभी किसी से नहीं लड़ता ।

सज्जन को यदि आप कटु वचन कहे तो वह उत्तर मे मधुर वचनो से आपको शीतल करेगा—

'हृदय की परख वही कर सकता है जिसमे सहानुभूति की मात्रा है । हम जो कुछ समझते है, वह तर्क से नहीं, वरन् अनुभव से । जानने के पहिले पहचानने की आवश्यकता है ।

आपको किसी के हृदय की परख क्यो नही होती ? इसलिये कि आपके हृदय मे उसके प्रति घृणा के भाव विद्यमान है । सहानुभूति प्रेम का पवित्रतम् स्वरूप है । महात्मा गौतमबुद्ध संसार के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष माने जाते हैं । ईसामसीह विश्व को सबसे बड़ी विभूति समझे जाते हैं—क्यों ! इसलिये कि उनका हृदय

भी महान् था। उनके हृदय मे किसी के प्रति घृणा की भावना नहीं थी, गौतम बुद्ध के हृदय मे मूक पशुओं तक के लिए सहानुभूति की धारा प्रवाहित होती थी।

ईशामसीह को लोगो ने सूली पर चढ़ा दिया! फिर भी प्राण निकलते समय उस महापुरुष के मुँह से जो शब्द निकले—वे हृदयग्राही है।

ऐ! पिता! इन्हे क्षमा करना, कारण ये नहीं समझ रहे है कि ये क्या कर रहे हैं?

अहमन्यता सहानुभूति का कट्टर शत्रु है। दृष्टि एवम् अनुभव का एक दूसरे से अटूट सम्बन्ध है। हृदय अनुभव करता है, और आँख देखती है। दयालु व्यक्ति ही देवदूत है। जिसके हृदय की गति गरीबो के हृदय के स्वर के साथ आरोहित एवम् अवरोहित होती है, वह विशाल हृदय वाला महापुरुष साक्षात् देवता है। उसकी आत्मा आनन्द का अनुभव करती है। ऐसे व्यक्ति का प्रतिद्वन्दी प्रतिपक्षी बुरे दिन, तथा शत्रु आदि कुछ भी नही बिगाड़ सकते।

सफलता-प्राप्ति के साधना-मंदिर का यह छठवां स्तम्भ तैयार हो गया और निष्पक्षता-रूपी सातवें स्तम्भ के बाद उस पवित्र मदिर की पूर्णाहुति होगी।



निष्पक्षता

द्वेष-भाव से परे हो जाना एक बहुत बड़ी सफलता है। द्वेषी मनुष्य का मार्ग कंटकाकीर्ण बना रहता है। स्वास्थ्य, सफलता, आनन्द, तथा समृद्धि की प्राप्ति में इससे बाधा पड़ती है। मनुष्य स्वभावतः अपने विचार से ही शत्रु पैदा कर लेता है। वह सोच लेता है कि अमुक व्यक्ति हमारा अनिष्ट सोचता होगा। बस जहाँ ऐसा विचार उसके दिल में प्रविष्ट हुआ कि वह उक्त व्यक्ति से बिना समझे बूझे द्वेष करने लग जाता है। परन्तु ज्योंही उसकी द्वेष भावना दूर हो जाती है, त्योंही वह व्यक्ति उसे मित्र-सरीखा दीखने लगता है।

द्वेष-भाव रखने वाले व्यक्ति के जीवन-पथ में, पग पग पर काटे पड़े मिलते हैं। जिस समय वह जीवन-पथ पर दौड़ लगाता है उस समय इस कार्य से उसके पैर बँध जाते हैं। फलतः वह लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता। परन्तु जो निष्पक्ष हृदयवाले व्यक्ति है उनके जीवन का पथ, हरे भरे खेतो के बीच से होकर निकला हुआ एक सुन्दर मार्ग है, जिसपर दिनभर सुखपूर्वक चलने के उपरान्त वह एक ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ उसे आराम ही आराम प्राप्त होता है।

निष्पक्षता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि, मनुष्य अभिमान छोड़ दे। कारण अभिमान के रहते हुए कभी चारों तरफ दृष्टि नहीं दौड़ाई जा सकती। हम सत्य से बड़े बड़े पहाड़ो को डिगा सकते है, अभिमान भी एक प्रकार का पहाड़ है। जन-साधारण किसी ऊँचे पहाड़ को देखकर उसे ही संसार समझ लेता है और यह सोच लेता है कि उस पहाड़ के दूसरी ओर दुनिया है ही नहीं। ठीक इसी तरह अभिमानी व्यक्ति अभिमान के आगे कोई दूसरी वस्तु नहीं देखता। परन्तु ज्योंही उसका वह अभिमानरूपी पहाड़ हट जाता है त्योंही उसे यह मालूम होने लगता है कि पहाड़ के उसपार भी एक सुन्दर प्रदेश बसा हुआ है।

द्वेषभाव से प्रभावित रहने से, आनन्द की प्राप्ति नहीं होती, जीवन मनोरंजन-शून्य हो जाता है मित्र छूट जाते है, किसी

प्रकार की सफलता भी दृष्टिगोचर नहीं होती। इतना होते हुए भी हम अपने को द्वेषभाव से मुक्त नहीं करते। जिन्हें औरों से डाह है, वे उनकी बातें सुनना भी नहीं चाहते, वे अपने विचार के सम्बन्ध में किसी प्रकार की आलोचना प्रत्यालोचना नहीं सह सकते। कारण वे यह समझे बैठे हैं कि उनका ही विचार सही है। वे अपने विचार के पक्ष और विपक्ष की बातों को सुन कर 'सत्य' को नहीं मालूम करना चाहते। वे अपने ही मार्ग को श्रेष्ठ समझते हैं, उसी मार्ग पर चलकर विजय प्राप्त करना चाहते है। वे इतना भी प्रमाणित नहीं करना चाहते कि उनका मार्ग सत्य से प्रकाशित है। हाँ, यदि कोई जानबूझकर उनके मार्ग को अन्धकारमय कह देता है तो वे उत्तेजित होकर कहने वाले की खोपड़ी गंजी करने को तैयार हो जाते हैं।

द्वेषी प्रकृतिवाला व्यक्ति हरएक के सम्बन्ध में अपनी एक निश्चित धारणा बना लेता है। कभी कभी उसकी धारणा का न कोई आधार होता है और न कोई कारण। फिर भी वह अपनी उस धारणा के विपक्ष में कोई तर्क नहीं सुनना चाहता। यदि वह तर्क सुनने का अभ्यस्त हो जाय तो उसका मस्तिष्क उर्वर होकर उसे मानसिक-शक्ति प्रदान करने लगे। परन्तु वह तो स्वयम् ही ज्ञान-प्राप्ति के मार्ग पर एक अड़ंगा लगा देता है। फलतः मनुष्य अन्धकार में फँस कर मूर्ख बन जाता है और उसका मस्तिष्क, विकास के मार्ग से स्थगित हो जाता है। इतना ही नहीं वरन उसके मस्तिष्क का सम्बन्ध अन्य मस्तिष्कों से भी नहीं होने पाता।

परिणाम-स्वरूप उसका मस्तिष्क अकेला पड़ जाता है, और अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।

जो लोग अपने हितैषियो की बात नही सुनते, उनके सम्बन्ध मे यह समझ लेना चाहिये कि विपत्ति ने उनपर आक्रमण कर दिया है। अयोग्य स्थान पर लगाई हुई पण्डिताई क्या कर सकती है? अन्धकारपूर्ण घड़े के भीतर रखा हुआ दीपक अन्धकार को दूर नही कर सकता। कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो केवल थोड़ा-सा ज्ञानार्जन कर लेने पर ही मदान्ध हो जाते है। उसे यह गर्व हो जाता है कि वह सब कुछ का ज्ञाता है। परन्तु जब विद्वानो के सत्सग से उसे ज्ञान होता है तब उसका मदरूपी ज्वर उतर जाता है और तब उसे यह भी मालूम हो जाता है कि वह मूर्ख है।

द्वेषी व्यक्ति के मस्तिष्क मे बाहर का प्रकाश नहीं आ सकता। कारण उसने ईर्ष्यावश अपने मस्तिष्क के द्वार को बन्द कर रखा है। वह दैवी संगीत को नही सुन सकता, वह स्वर्गीय सौन्दर्य को नहीं देख सकता, दैवी सुख का रसास्वादन नही कर सकता। वह दिव्य-ज्योति का प्रकाश नहीं पा सकता, क्योकि उसने द्वेष के वशीभूत हो अपने सभी ज्ञान-मार्ग बन्द कर रखे है। वह स्वयम् अपनी प्रशंसा करता है, अपनी ही बातो को प्रधानता देना चाहता है। ऐसा व्यक्ति बुद्धिमान नही हो सकता। वह ऐसे विचार और परामर्श को हितकर समझता है जो उसके विचारो के अनुकूल हो। वह हरएक वस्तु का एक ही मार्ग

देखता है । वह समझता है कि उस वस्तु का दूसरा मार्ग होता ही नही । परन्तु हरएक वस्तु के दो स्वरूप होते है और देखने वाला जबतक दोनो स्वरूपों को अच्छी प्रकार नही देखता तब तक वह दोनो मे से सत्य, श्रेष्ठ, उत्तम तथा श्रेयस्कर कौन है, इसका पता भी नहीं पा सकता ।

संसारियों की प्रत्येक समस्या के दो रूप होते हैं । दिन और रात, अन्धकार और उजाला, सुख और दुःख, आनन्द और क्लेश—सभी जोडे के रूप मे होते हैं । यह उभय-विभाग दुनिया की एक बहुत बड़ी खूबी है । इसी का नाम 'दुनिया' है । अन्धकार अपने को श्रेष्ठ बताता है और प्रकाश अपने को, परन्तु दोनों की शक्ति बराबर है । वे दोनो अपने को प्रबल घोषित करने के लिए प्रमाण देते हैं । दोनों मे से कौन सही और कौन सच्चा है, इसका निर्णय तो तभी किया जा सकता है, जब कि दोनो की बातें सुनी जायँ । यही निष्पक्षता की आवश्यकता होती है । चोर अन्धकार को श्रेष्ठ बतायेगा, अन्धेरे मे मुँह छिपाकर सोने वाला अन्धकार को श्रेष्ठ बतावेगा, परन्तु जिन्हे चाँदनी रात मे सुख मिलता है, वे क्योंकर अन्धकार को श्रेष्ट बतायेंगे ? जो प्रकाश चाहते है, जो साहूकार हैं उन्हे अंधकार भला कब ठीक लग सकता है ? अब इसका निर्णय तो निष्पक्ष व्यक्ति ही कर सकता है । दोनो मे से सत्य ढूंढ निकालने का प्रयत्न करना बहुत बड़ा काम है । इसी प्रयत्न का नाम है "सत्य मार्ग की खोज" । पक्षपाती वस्तु-विशेष का केवल एक

अङ्ग देखता है परन्तु निष्पक्ष व्यक्ति सब अङ्गों को देखता है, क्योंकि उसका ध्येय सत्य की खोज करना रहता है ।

कपट, चातुरी तथा कूटनीति को छोड़कर हिंसा-रहित सरलता के साथ जो बात जैसी देखी, सुनी या समझी गई हो, उसे बिना घटाये-बढ़ाये उसका वास्तविक रूप व्यक्त कर देना ही सत्य कहलाता है। सत्य पर स्थिर रहने से बढ़कर दूसरा कोई आनन्द नहीं। दूसरों की उन्नति करने में अपनी भी उन्नति होती है। जब तक मनुष्य अपनी आत्मा को नहीं पहचानता, इतना नहीं जानता कि वास्तव में मैं क्या हूँ, कौन हूँ और संसार में किसलिये आया हूँ तबतक विजय-प्राप्ति की अभिलाषा करना व्यर्थ है। जो कार्य अपने प्रभुत्व प्रदर्शन की अभिलाषा से किया जाता है वह निरर्थक है, कारण उस काम से आत्मा की शुद्धि नहीं होती। शरीर की शुद्धि सत्कर्म से होती है। इन्द्रियों की शुद्धि दया और सत्य से तथा चित्त की शुद्धि अपने मन में निष्पक्षता का भाव लाने से होती है।

ढाई सहस्र पूर्व, संसार में एक राजपुत्र उत्पन्न हुआ था। आनन्दमहल में रहते हुए भी वह दुःखमय जगत का स्वप्न देखा करता था। रति-सरीखी भार्या को पाकर भी विषय-भोग से उदासीन रहता था। ऐश्वर्य के वातावरण में रहते रहते उसे संसार की वेदना का भान होने लगा था। एक रात्रि को वह चुपके से उठा। राजपुत्र का वेश त्याग साधु वेश धारण कर वन वन की खाक छानने लगा। किसलिये ? सत्य की

खोज के लिए ! उसने अहिंसा का जो बीजारोपण किया, क्या कभी उस बीज से उत्पन्न हुआ वृक्ष सूख सकता है ?

दो सहस्र पूर्व यूरोसलम मे एक बढ़ई रहता था। वह निर्धन, अपढ़ बढ़ई था। उसे दुनिया पागल समझती थी। उसके कुटुम्बी उसे पागल समझते थे। वह अपने देशवासियो की आँख मे खटकने लगा। उसे देशवासियो ने सूली के तख्ते पर चढ़ा दिया। पर उसके बोये हुए बीज से उत्पन्न वृक्ष संसार के लिए अनुभूति हो गया। उसके रक्त ने सारे विश्व की कायापलट कर दी।

इमर्सन का कहना है कि "उस समय के लिए सावधान हो जावो, जब कि ईश्वर संसार मे फिर कोई विचारक भेज देगा।" वह व्यक्ति कदापि विचारक नहीं कहा जाता जो द्वेष की भावना मे लिप्त है। शुद्ध विचारक के विचार ठीक उसी प्रकार के होते हैं जिसप्रकार पुष्प से निकली हुई उसकी सुगन्धि। द्वेषी विचार वाला व्यक्ति जो भी विचार प्रकट करेगा, उसपर अपना रंग चढ़ा देगा। उसका विचार समयानुकूल परिस्थिति के अनुसार नहीं होगा वरन् उसका निजी विचार होगा, शुद्ध विचार का व्यक्ति यदि रेगिस्तान मे भी चला जाय तो लोग उसका साथ नही छोड़ेगें। यदि वे उसका साथ छोड़ भी दें तो उसका शुद्ध विचार उस अगम्य रेगिस्तान को चीरता हुआ, उन तक पहुँच जायगा।

उदाहरण के लिए महात्मा गान्धी को ले लीजिये। जिस

समय वे जेल के भीतर बन्द थे उस समय भी उनके विचार लोगों पर प्रकट होते रहते थे। जेल की ऊँची दीवारों को तोड़कर इनकी विचार-धारायें जनता तक पहुँच ही जाती थीं।

सच्चा विचारक विषयाडम्बर की चहारदीवारी के बाहर ही रहता है। उसपर व्यक्तिगत हानि लाभ का प्रश्न अपनी छाया नहीं डाल सकता।

केवल धन के ही क्षेत्र की बात नहीं है। साहित्यिक क्षेत्र मे भी वे ही व्यक्ति सफल हुए है जो हृदय से शुद्ध तथा द्वेष भाव से दूर रहे है। महात्मा तुलसीदास, सूरदास, शेक्सपियर. होमर आदि महान कवियो एवम् कलाकारो का जीवन निष्पक्षतापूर्ण था। तुलसीदास तो संसार के सभी कवियो से अपने को छोटा समझते थे। ये कवि स्थानीय विभूति नहीं है, इन्हे तो सार्वदेशिक एवम् सार्वभौमिक ख्याति प्राप्त है। उनके विचार निजी नहीं वरन् समाज के हित की दृष्टि से प्रकट किये गये व्यापक विचार हैं। वे देवता तुल्य है। वे मनुष्यमात्र का कल्याण चाहते थे, वे प्राणी-मात्र के हितैषी थे।

सच्चा विचारक ही सबसे बड़ा व्यक्ति है, उसका पद अत्यन्त महान् होता है। निष्पक्षता के चार आधार हैं।

न्याय	शान्ति
धैर्य	बुद्धिमत्ता

जितना पाना, उतना देना—इसका नाम है न्याय। जितना पाना उतना न देना, अथवा जितना देना उतना न पाना, चोरी

कहलाता है। इसका अर्थ यही हो सकता है कि दो मे से एक धोखा खा रहा है या दूसरे को धोखा दे रहा है। न्यायी व्यक्ति अनधिकारपूर्ण बातें नहीं करता। वह नाजायज़ लाभ नहीं उठाना चाहता। वह वस्तुओ का ठीक ठीक मूल्य आँकता है। वह यह नहीं सोचता कि उक्त वस्तु को यदि फिर बेची जाय तो वह कितने पर बिकेगी, वरन् वह यह सोचता है कि उस वस्तु के लिए उसे उस समय ठीक ठीक कितना देना चाहिये। वह बेचने वालो को हानि पहुँचाकर स्वयम् लाभ नहीं उठाना चाहता। वह यह जानता है कि व्यवहार मे समानता का ही लेन देन अच्छा होता है। 'एक की हानि दूसरे का लाभ' यह सिद्धान्त स्वार्थी व्यक्तियो का है। क्या ऐसा सम्भव नहो है कि दोनो का साथ साथ लाभ और दोनो की साथ साथ हानि हो! "एक की हानि दूसरे का लाभ' वाले व्यवसाय मे दोनो पक्ष वेइमानी करते पाये जाते हैं।

व्यापार मे 'सौदेबाजी का होना व्यवसाय का वास्तविक स्वरूप नहो है। ऐसी नीति स्वार्थी व्यक्ति ही रखते है। वे देते है थोड़ा और लेना चाहते हैं अधिक। शुद्ध सिद्धान्त वाले अपने व्यवसाय के भीतर "सौदेबाजी" को स्थान नहो देते। न्याय के आधार पर ही व्यवसाय की नींव डालते हैं। वे ठीक दाम ले कर अच्छी वस्तु देते है। वे किसी ऐसे व्यवसाय मे अपना हाथ नहीं डालते जिसका आधार धोखाधड़ी हो। उनकी वस्तुयें ठीक होती हैं और वे उनका उचित दाम लेते हैं।

ऐसे ग्राहक जो विक्रेता को झुकाना चाहते हैं, स्वयम् झुक जाते हैं। उनकी इस प्रवृत्ति से दो बात साबित होती है। पहिली बात यह कि या तो विक्रेता बेइमान हैं अथवा वे स्वयम् विक्रेता को कम से कम मुनाफा उठाने का अवसर देना चाहते हैं।

जो कुछ हो मनुष्य को नीचता का परित्याग कर देना चाहिये। इससे न्यायपरता नहीं आती और मनुष्य सदा अन्याय मार्ग का अवलम्बन करता पाया जाता है।

धैर्य, निष्पक्ष व्यक्ति का महान लक्षण है। जो मनुष्य साहस और पुरुषार्थ से भाग्य को पराजित कर लेता है, वही इस लोक और परलोक के सम्पूर्ण सुखों को प्राप्त करता है। धैर्यवान पुरुष, कैसे भी कष्ट में क्यों न पड़े, उसका धैर्य नष्ट नहीं होता, जैसे प्रज्वलित अग्नि को उलट देने पर भी उसकी ज्वाला नीचे की ओर कभी नहीं जाती। उत्कर्षित होने के लिये धैर्य की आवश्यकता पड़ती है। धैर्य के विना सारी शक्ति उस मोम के पुतले के समान है जो कि देखने में तो सुन्दर लगता है, परन्तु तनिक भी ऊष्णता पाते ही पिघल कर पानी पानी हो जाता है। जो धैर्यवान है, वह अपने धैर्यरूपी गुण से दावाग्नि को भी शान्त कर देता है।

जिसके पास धैर्य-धारण की शक्ति नहीं है उसके पास सब कुछ होकर भी कुछ नहीं है। जिस समय महान विपत्तियों के झकोरे में पड़ जाते है, उस समय धैर्यरूपी पतवार ही जीवन-

नैया को डूबने से बचाता है, अन्यथा जीवन की इह लीला समाप्त होने में कुछ भी बाकी नहीं रहता।

धीरज धरे सो उतरे पारा।
नाहिं त डूबि मरे मझधारा॥

यदि मनुष्य को उन्नति करना है तो उसे अपने को, अपने वश मे रखना चाहिये और तभी उसकी इस संसार मे उपयोगिता भी है। हमे औरो की भी सुविधा का खयाल रखना होगा। अपने विरोधियो के भी हित का खयाल करना पड़ेगा। यदि हम औरों की उपेक्षा करते रहेंगे तो उसका फल यह होगा कि हम स्वयम् भी शीघ्र ही उपेक्षित हो जायेंगे। आज कल जीवन के प्रत्येक अङ्ग मे प्रतिक्षण खींचा-तानी का दृश्य दीख पड़ता है। उससे हृदय दुःखी होता है, मस्तिष्क मे अशान्ति उत्पन्न होती है। धैर्य एक अप्राप्य वस्तु है। इसके सुलभ होते ही हृदय उदार हो जाता है, मस्तिष्क मे खूबी आ जाती है। जिस प्रकार कोमल जल बहते बहते कड़े से कड़े पत्थर को भी तोड़ डालता है उसी प्रकार धैर्य विपत्ति को काट डालता है। धैर्य से ही विजय प्राप्त होती है और तभी विजित वस्तु पर अधिकार स्थापित हो सकता है।

धैर्य के साथ साथ शान्ति भी आती है। यह एक बहुत बड़ी प्रतिष्ठित प्रतिभा है। यह भी एक स्वर्गीय गुण है। जिस समय यह मनुष्य के स्वभाव मे प्रवेश करती है उस समय यह पुण्य सलिला भागीरथी की भाँति मनुष्य-समाज की तरण-तारिणी बन

जाती है। शान्त प्रकृति का पुरुष अपने तथा दूसरो के हित की बाते साथ साथ सोचता रहता है। यदि वह अपने किसी काम को महत्वपूर्ण समझता है तो साथ ही औरो के कामो को भी महत्व-पूर्ण समझता है।

शान्त तथा निष्पन्न प्रकृति का पुरुष अपने जीवन मे अलौ-किक आनन्द का अनुभव करता रहता है। यही नही वरन् वह अपनी तमाम शक्तियो को अपनी चेरी बनाने मे भी सफल होता है। उसका मस्तिष्क पवित्र तथा शुद्ध रता है, उसकी वृत्ति एकाग्र रहती है, फलतः वह किसी भी क्षण किसी कार्य को करने को तैयार रहता है। शान्त मस्तिष्क वाले व्यक्ति से विषय-वासना कोसो दूर भागती है।

आत्म-संयम सब धनो मे श्रेष्ट धन है—और शान्ति सब वरदानो से श्रेष्ट वर है।

बुद्धि, निष्पन्न व्यक्ति की चेरी बनकर रहती है। वह उसका पथ-प्रदर्शित करती रहती है। बुद्धि की सखियाँ उस व्यक्ति की सेवा किया करती है। बुद्धि एक बहुमुखी प्रतिभा है। बुद्धिमान व्यक्ति अपने को सर्वोपयोगी बनाये रहता है। वह जन-साधा-रण के हित के लिये ही काम किया करता है। वह चरित्र सम्बन्धी किसी विशेष नियम का उल्लंघन नहीं करता। मूर्ख व्यक्ति से संसार का कोई उपकार नहीं हो सकता। वह पेटू तथा स्वार्थी होता है। वह चरित्र सम्बन्धी सिद्धान्तो की अव-हेलना किया करता है।

प्रायः प्रत्येक निष्पन्नतापूर्ण कार्य मे बुद्धि का ही सहयोग रहता है। बिना बुद्धि के संयोग के कोई काम नहीं हो सकता। बुद्धिमान व्यक्ति का प्रत्येक शब्द, प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक विचार संसार पर प्रकट होता रहता है, कारण उनमे तत्त्व होता है और ऐसा तत्त्व होता है जिससे मानव-समाज का कुछ उपकार हो। बुद्धि—ज्ञान की वापी तथा शक्ति की सरिता है। समझदार मस्तिष्क के लिए किसी की सहायता की आवश्यकता नही। वह अपने आपका स्वयम् सहायक होता है, वह औरो को सहायता पहुँचाता है। ज्ञान की नींव पर उसकी सफलता का महल उठता है। जब किसी व्यक्ति की बुद्धि विकसित होती है तो वह अपने पड़ोसियो से बहुत ऊँचे चढ़ जाता है। उसका एक प्रकार से पुनर्जन्म हो जाता है। उसकी शक्ति मे नई स्फूर्ति आ जाती है। वह एक नए संसार की सृष्टि करता है।

सफलता का यह, निष्पन्नतारूपी सातवां साधन है। यह साधन ठोस, गंभीरपूर्ण तथा उत्कर्षित साधन है। सफलता के इन सात साधनो का जो गंभीरतापूर्वक अध्ययन करेगा उसे अपने जीवन-संग्राम मे अवश्य सफलता प्राप्त होगी।



माला की प्रकाशित पुस्तकें

१—जीवन चरित्र

१) छत्रपति शिवाजी
१) पृथ्वीराज चौहान
१) महाराणा प्रताप
१।) अमरसिंह राठौर
१।) सम्राट अशोक
२॥) वीर दुर्गादास
२) झांसी की रानी
१।) देश के दुलारे
१) हैदर अली
१) विद्रोही सरदार
१) श्री कृष्ण चरित्र
१) वीर मराठा
१।) प्रतापी आल्हा और ऊदल
१॥) मेवाड़ का इतिहास

२—उपन्यास

१॥।) रहमदिल डाकू
१॥।) जवानी का नशा
१॥।) अपराधिनी
१॥।) हाहाकार
१॥) नदी मे लाश
१॥) प्रेम के आँसू
१) होटल मे खून
१॥) मायावी संसार
१।) प्यारी तलवार
१) साहसी राजपूत
१) बहादुर नकाबपोश
१) प्रेम का पुजारी
॥।) अपराधी कौन

३—हास्यरस

१।) महाकवि साँड़
१।) गुरुघटाल
१) लेखक की बीबी
१) मेरे राम का फैसला
१) मिस्टर तिवारी का टेलीफोन

४—स्त्रियोपयोगी

२) स्त्री शास्त्र
॥।) राजपूत नन्दिनी
॥।) वीर बाला
॥।) वीर दुर्गावती

५—नवयुवकोपयोगी

१॥) स्वास्थ्य और व्यायाम
१।) सफलता के सात साधन
१।) सरल संस्कृत प्रवेशिका

६—आध्यात्मिक

५) उपनिषत्समुच्चय
१।) अवतारवाद मीमांसा
॥।) शान्ति की ओर
॥।) शुद्धि सनातन

चौधरी एण्ड सन्स,

बनारस सिटी।